अर्गल राज्य का इतिहास

(गौतम क्षत्रिय एवं राजवंश)



अर्गल की वीर रानी अंगारमती

(सन् १२४६ में गंगा के तट पर बकपर में अवध के सूबेदार से युद्ध)

अर्गल राज्य का इतिहास

(गौतम वंश एवं राज परिवार)

शिवसिंह चौहान
एम.ए., बी.एड.
अवकाश प्राप्त
प्रधानाचार्य
संरक्षक–राष्ट्रीय शिक्षक संघ
उत्तर प्रदेश

कल्पना प्रकाशन
819, M. I. G., C सेक्टर
विश्वबैंक बर्रा, कानपुर

ARGAL RAJIA KA ETIHAS
By
Shiv Singh Chauhan
M.A., B.AD.
Price : Forty Rupees Only

सर्वाधिकार सुरक्षित लेखकाधीन

मूल्य : चालीस रुपये मात्र

पुस्तक : अर्गल राज्य का इतिहास
लेखक : श्री शिवसिंह चौहान
एम. ए., बी. एड.
प्रकाशक : कल्पना प्रकाशन, बर्रा, कानपुर
मुद्रक : मधुर प्रिण्टर्स
१२७/११००, डब्ल्यू-वन साकेतनगर,
कानपुर–२०८०१४
संस्करण : प्रथम
प्रकाशन वर्ष : १९८९

समर्पण

अर्गल राज्य के

वर्तमान प्रकाश-स्तम्भ

परम श्रद्धेय

माननीय राजा श्री चन्द्रभान सिंह 'जूदेव'

के

कर-कमलों में

सादर समर्पित



श्री चन्द्रभान सिंह जूदेव
अर्गल नरेश



स्वर्गीय राजा विसेश्वर सिंह जूदेव
सन् १९२२ में स्वर्गवासी हुए ।

ॐ

दो शब्द

इतिहास लिखना एक कठिन कार्य है—खास तौर पर प्राचीन इतिहास। प्राचीन इतिहास के सम्बन्ध में हमें बहुत कम जानकारी मिलती है। वेदों, पुराणों, स्मृतियों व ब्राह्मण-ग्रन्थों आदि में कथानक के रूप में प्राचीन इतिहास की कुछ झलक मिलती है। इसके पश्चात् बौद्ध व जैन साहित्य मिलता है। रामायण व महाभारत भी प्राचीन इतिहास की झलक देते हैं। परन्तु इतिहास की सम्पूर्ण विधाओं को यह प्रस्तुत नहीं करते। वेद और पुराण, स्मृतियाँ, ब्राह्मण ग्रन्थों आदि की रचना कई सौ पीढ़ियों पहले हुई थी। तब में और अब में महान् अन्तर है। प्राचीन ग्रन्थों में वर्णित वंशों में से अनेक अब विलुप्त हो चुके हैं। उस समय की वर्णन शैली और अभिव्यक्ति का ढंग भी दूसरा था। आज जन-साधारण उस सबको गप्प की श्रेणी में रखता है। परन्तु वास्तव में ऐसा है नहीं। वैदिक ग्रन्थों, पुराणों, ब्राह्मण ग्रन्थों, स्मृतियों, संहिताओं आदि में भी बड़ा सार है। आवश्यकता हैं उसके मंथन की, गहन अध्ययन की। निःसन्देह यह एक उबाऊ कार्य है—गहरे समुद्र में धैर्यपूर्वक गोता लगाकर मोती खोजने के समान। इस कार्य में धैर्य, लगन और अथक परिश्रम अपेक्षित है।

भारतवर्ष में समय-समय पर अनेक जातियाँ आयीं, साम्राज्य स्थापित किया, फिर काल के कलेवर में समा गई। कुछ विदेशी जातियाँ यहाँ की प्राचीन आर्य जाति में ही घुम-मिल गयीं, हिन्दू (ब्राह्मण) धर्म को स्वीकार कर लिया, यहाँ की देवी-देवता व संस्कृति को अपना लिया। भारतवर्ष में यवन, हूण, शक आदि आकर बस गये और पूर्ण रूप से यहीं के होकर रह गये। उनका प्रथक

अस्तित्व ही समाप्त हो गया। परन्तु दो विदेशी शक्तियाँ, मुस्लिम धर्माव-लम्बी और फिर अंग्रेज (ईसाई) यहाँ आये और अपना प्रथक अस्तित्व बनाये रक्खा। उन विदेशियों ने इतिहास-लेखन में रुचि ली। अंग्रेजों ने न केवल नवीन इतिहास-लेखन में रुचि ली वरन् प्राचीन ग्रन्थों का भी गहन अध्ययन किया और खोजपूर्ण तथ्य प्रकाश में लाये। मुस्लिम लेखकों ने अधिकांशत: उसी काल का इतिहास लिखा है अथवा कुछ प्राचीन ग्रन्थों का अनुवाद भी किया है। कहा जाता है कि अल्बरूनी ने पौराणिक ग्रन्थों का बहुत अध्ययन किया था। चाहे मुस्लिम लेखक हो अथवा योरोपीय लेखक, ये लोग सत्ता पक्ष से जुड़े थे। अत: अहंकार और अपनी जाति को श्रेष्ठ समझने की भावना थी। अत: इतिहास को निष्पक्ष नहीं लिख सके। बाद के अंग्रेज इतिहासकारों ने वास्तव में बड़ा कार्य किया है। मुस्लिम इतिहासकार अपने दुराग्रह को छोड़ नहीं सके। अपने स्वामियों का गुण गान व हिन्दुओं की निन्दा करना—यही उनका उद्देश्य रहा है। उन्होंने बुरी तरह से इतिहास को विकृत किया है।

आर्यों में इतिहास लिखने के प्रति कला दूसरे रूप में थी। वह थी कथानक के रूप में जो आज की इतिहास-लेखन कला के अनुरूप नहीं है। फिर भी महाभारत, रामायण व पुराणों आदि में उसकी झलक मिलती है। उन्हीं प्राचीन ग्रन्थों का मंथन कर योरोपीय एवं भारतीय इतिहास लेखकों ने आर्यों के प्राचीन गौरव को विश्व के सम्मुख प्रकट किया है। लगभग दो हजार वर्षों तक यहाँ विदेशी आक्रान्ता आते रहे और यहाँ की बहुमूल्य सामग्री नष्ट करते रहे। स्थापत्य कला के बेजोड़ नमूने मन्दिर, भवन, तक्ष-शिला व नालन्दा के विशाल पुस्तकालय तथा अनेकों प्रकार की दुर्लभ सामग्री इन लुटेरों ने नष्ट कर डाली। सबसे अधिक क्षति क्रूर, वर्बर, हृदयहीन भूखे मुस्लिम आक्रान्ताओं ने की। बची-खुची साग्रमी अंग्रेज यहाँ से उठा ले गये। जो आज भी इंग्लैण्ड में सुरक्षित है। अंग्रेज जब इस देश में पूर्णत: स्थापित हो गये तो उन्होंने यहाँ की सभ्यता, संस्कृति व कला आदि में रुचि लेना शुरू किया। केवल अपने पूर्ववर्ती शासकों के समय का ही नहीं वरन् वैदिककाल, बौद्धकाल, मौर्य व गुप्तकाल आदि के सम्बन्ध में भी व्यापक खोज की। परन्तु अंग्रेज भी पूर्णत: निष्पक्ष नहीं रहे। अंग्रेजों को भ्रम था कि ग्रीक सभ्यता ही सबसे प्राचीन है। इसके उपरान्त भी कर्नल टॉड जैसे अनेक विद्वानों ने भारत के प्राचीन गौरव को विश्व के सम्मुख उजागर किया। भारत की आजादी के बाद भारतीय विद्वानों ने इतिहास लेखन में रुचि लेना प्रारम्भ कर दिया है। नये-नये शोध-ग्रन्थ लिखे जा रहे हैं।

इसी दिशा में अर्गल राज्य एवं गौतम नरेशों से सम्बन्धित इतिहास का यह लघु प्रयास है। इस सम्बन्ध में अभी बहुत कुछ खोज करना शेष है। आशा है इस पुस्तक के अवलोकन से इस ऐतिहासिक, प्राचीन एवं गरिमा-मण्डित वंश की ओर शोध छात्रों का ध्यान आकर्षित होगा। उनके द्वारा नई उपलब्धियाँ प्राप्त होंगी। इस छोटी सी पुस्तक के द्वारा जन-साधारण को भी गौतम क्षत्रिय वंश के सम्बन्ध में पर्याप्त जानकारी हो सकेगी।

शिवसिंह चौहान
ग्राम–बरिहा
पो०–रामनगर
जनपद–मैनपुरी
उत्तर प्रदेश

अनुक्रम

शुद्धि-पत्र

1

पूर्व एवं वैदिककाल

आदिम अवस्था में मनुष्य गुफाओं, कंदराओं में पूर्णत: नग्न रूप में रहता था। बन में प्राप्त होने वाले कंद-मूल, फल एवं पशु-पक्षियों के शिकार पर जीवनयापन करता था। जनसख्या बहुत कम थी। छोटे-छोटे परिवार-समूह थे। हिंसक पशुओं एवं प्राकृतिक आपदाओं से प्रतिक्षण भय रहता था। उनके पास पत्थरों एवं लकड़ी के बेढंगे अस्त्र थे। धातुओं का प्रयोग नहीं जानते थे। शनैः-शनैः जीवन से संघर्ष करते हुए वंश-वृद्धि करते रहे। छोटे परिवारों से बढ़कर कबीले बने। अभी सत्ता मात्र सत्तात्मक ही थी। जब बड़े-बड़े कबीले बन गये तो उदर-पूर्ति व जीवनयापन के क्षेत्र को लेकर आपस में एक कबीले से दूसरे कबीले से संघर्ष होने लगे। कुछ कबीले जिन्हें बाद में जन कहा गया, उदर पूर्ति एवं चारागाह के नये क्षेत्र खोजने के लिए अपने मूल निवास मरु प्रदेश से चल पड़े। वे अब पशु पालने लगे थे और उसके लाभ व महत्व को समझ गये थे। शनैः-शनैः ये लोग चारों ओर फैलने लगे। कुछ टुकड़ियाँ ईराक-ईरान की तरफ आईं, कुछ योरोप की ओर गईं। मरु प्रदेश के स्थान का सर्वमान्य निर्णय अभी तक नहीं हो सका है। परन्तु अधिकांश विद्वानों का मत है कि यह स्थान हिमालय पर्वत से उत्तर पश्चिम में था। श्री द्वारिका प्रसाद मिश्र ने यह स्थान पामीर और उसके आस-पास का क्षेत्र माना है। उन्होंने यह सिद्ध किया है कि मनु और यम दो भाई थे और प्रारम्भ में ख्वारिज्म (रूस के उजबेकिस्तान का एक भाग) में रहते थे। इसमें उन्होंने पौराणिक ग्रन्थों के अतिरिक्त ईरानी जेंदा-वेस्ता का भी सहारा लिया है। इसी स्थान को मिश्र जी ने देवलोक माना है। बाल गंगाधर तिलक ने आर्यों का आदि निवास आर्कटिक क्षेत्र माना था। श्री तिलक के मतानुसार ईसा से आठ हजार वर्ष पूर्व उत्तरी ध्रुव मनुष्य के रहने योग्य था। पश्चात् मौसम के परिवर्तन से विवश होकर आर्यों को वह प्रदेश छोड़ना पड़ा और आर्य मध्य एशिया होते हुये घूमते-फिरते

भारतवर्ष आ गये। श्री तिलक के अनुसार ऋग्वेद में ऐसे प्रमाण मिलते हैं कि आर्यों को उत्तरी ध्रुव के जीवन का परिचय था। जिन विद्वानों का मत है कि आर्य भारतवर्ष के ही मूल निवासी हैं। उनमें स्थान विशेष पर मतभेद है। कुछ विद्वानों का मत है कि आर्य सप्तसिंधव (पंजाब, गांधार) के निवासी थे और वहाँ से पूरे देश में शनैः-शनैः फैल गये। उनका कथन है कि वेदों में इन प्रदेशों की नदियों, पर्वतों व अन्य भौगोलिक स्थितियों के संकेत मिलते हैं।

दूसरा मत है कि आर्य मध्य देश में रहते थे और वहाँ से शनैः-शनैः सम्पूर्ण भारत में फैल गये। अयोध्या 'प्रतिष्ठान व गया उनके मुख्य केन्द्र थे। वहीं से कुछ लोग पश्चिमी दर्रों को पार कर मध्य एवं पश्चिमी एशिया तक फैल गये। एक रोचक तथ्य यह है कि बाल्टिक के तट पर स्थित लिथुनियाँ और लुटविया की भाषाओं में प्राचीन संस्कृत के शब्द मिलते हैं। लुटविया और इस्टोनियाँ के प्राचीन महाकाव्यों में यह उल्लेख मिलता है कि वे लोग भारत से उस समय वहाँ आये जब भारत में मनुष्य और देवता एक साथ रहते थे।

समय-समय पर और कबीले आते गये और पहले आये कबीलों को आगे बढ़ने को विवश करते रहे। धीरे-धीरे ये लोग अफगानिस्तान व सप्त सिन्धु तक आ गये। यही लोग आर्य कहलाये। आर्य रामचन्द्र तिवारी ने एक लेख में लिखा है कि आर्य बाहर से आये अथवा वे यहीं के मूल निवासी थे यह तभी हल हो सकता है जब सप्तसिन्धु का सही अर्थ निकाला जा सके। उस समय बहुत से बाहर के प्रदेश भी भारतवर्ष के अन्तर्गत थे जो अब नहीं हैं।

चन्द्रगुप्त मौर्य के ही राज्यकाल में अफगानिस्तान भारत का एक प्रदेश था। कनिष्क के काल में राज्य का विस्तार मध्य एशिया तक था। रूसी तुर्किस्तान में आज भी एक प्रदेश सप्तनद के नाम से जाना जाता है। धीरे-धीरे आर्य फैलते गये। आर्यों के फैलाव से आपसी संघर्ष हुए और अनार्यों से भी युद्ध हुए। फारस में आर्यों का गृह-युद्ध आर्थिक कारणों से ही हुआ था।

अब इन कबीलों को जिन्हें जन और बाद में आर्य कहा गया, जीवन के भरण-पोषण के प्रचुर साधन उपलब्ध थे और जीवन भी अपेक्षाकृत सुरक्षित था, कुछ गम्भीर स्वभाव के लोगों का ध्यान सृष्टि रचना की तरफ गया। जिज्ञासा हुई कि पानी कौन बरसाता है, हवायें कौन चलाता है. अन्न और वृक्ष कैसे पैदा होते हैं? जीवन और मृत्यु का क्या रहस्य है इत्यादि। इन सब बातों पर और फिर इसी क्रम में लोगों ने अध्यात्म पर चिन्तन व

मनन प्रारम्भ किया। जिसके परिणामस्वरूप वे लोग उस निष्कर्ष पर पहुँचे जिसके आधार पर बाद में बड़े-बड़े ग्रन्थ लिखे गये। परन्तु यह कार्य तुरन्त नहीं हो गया वरन् कई पीढ़ियों का योगदान इसमें था। इस प्रकार से ऋग्वेद जो आर्यों का प्रथम ज्ञात आदि ग्रन्थ है, की रचना हुई। ऋग्वेद के रचनाकाल को लेकर विद्वानों में मतभेद है। कुछ विद्वानों का मत है कि ऋग्वेद की रचना ईसा 4000–5000 वर्ष पूर्व हुई थी। तिलक महोदय के मतानुसार वेद ईसा से लगभग 10,000 दस हजार वर्ष पूर्व प्रणीत हुए। (Arttie Home in Veda's) श्री अविनाशचन्द्र जी ने अपनी पुस्तक (Rigvedic India PP 578–579) में कुछ और ही निष्कर्षों का प्रतिपादन किया है। उनका कथन है कि ऋग्वेद के प्राचीन सूक्त उस समय रचे गये जब राजपूताने में और उत्तर प्रदेश में समुद्र लहरा रहा था। तात्पर्य यह है कि वेद अति प्राचीन हैं और मंत्रों के दृष्टा भी। कुछ विद्वानों का यह भी मत है कि ऋग्वेद का रचना-स्थल ईरान है। जिसकी गणना पहले भारतवर्ष के अन्तर्गत ही की जाती थी।

वेद मंत्रों के दृष्टा के रूप में जिन महापुरुषों के नाम लिए जाते हैं, उनमें से एक ऋषि अंगिरा थे। पौराणिक ग्रन्थों से ज्ञात होता है कि शेषशायी भगवान् विष्णु की नाभि से कमल उत्पन्न हुआ। उस कमल से ब्रह्मा जी की उत्पत्ति हुई। ब्रह्मा जी के आठ मानस पुत्रों में से एक अंगिरा थे। कहीं-कहीं बारह मानस पुत्रों का उल्लेख है। अंगिरा कुल के ऋषियों का वेदों की रचना में बड़ा महत्वपूर्ण योगदान रहा है। अंगिरा कुल के मंत्रदृष्टा ऋषियों की संख्या ऋग्वेद के अनुसार इकहत्तर है। यथा—ऋग्वेद 10.174 (1 सू०) 9.61 (1 सू०), 10.117 (1 सू०), 1.100, 9.89 (2 सू०) मत्स्य 145.102 इत्यादि। सम्पूर्ण ऋग्वेद में 10 मण्डल हैं। नवें मण्डल में अंगिरा वंशियों के सूक्त हैं। इस वंश के ऋषियों ने अपनी रचना से ऋग्वेद को धनी बनाया है। अंगिरा को कहीं पर दिव पुत्र (सूर्य पुत्र) तो कहीं पर अग्नि पुत्र (ऋ० वे० 10.62.5) भी कहा है। इन्होंने बन में अग्नि को छिपा पाया (ऋग्वेद 5.11.6) और सर्वप्रथम यज्ञ करने की बात सोची। (ऋ० वे० 10.67.2)। इसी यज्ञ-क्रिया के द्वारा इन्होंने इन्द्र (आर्यों के पूर्वज राजा और सेनापति) से अमरत्व (सहायता) व मैत्री प्राप्त की (ऋ० वे० 10.62.1) किन्तु एक स्थल पर इन्द्र के कार्य में इन्द्र की अपेक्षा अंगिरा को अधिक श्रेय प्राप्त हुआ है (ऋ० वे० 10.62.7)। ऊपर उल्लेख किया गया है कि अंगिरा ने अग्नि को छिपा पाया अर्थात् ऋषि ने सरलतापूर्वक अग्नि को प्रज्वलित करने की विधि खोज निकाली और उसके

प्रयोग प्रारम्भ किये। यह एक महान् वैज्ञानिक खोज थी। आज का संसार उसकी सभ्यता, उसका विकास अग्नि की जानकारी के अभाव में सम्भव न हो पाता।

अंगिरा ब्रह्म विद्या के उपदेशक थे। आत्मोपनिषद में अंगिरा एक दार्शनिक के रूप में प्रस्तुत हुए हैं। उन्होंने देह, जीवात्मा तथा परमब्रह्म के विषय में विचार प्रकट किये। मुण्डकोपनिषद् में एक आख्यान है कि शौनक नामक ऋषि जो एक विश्वविद्यालय के अधिष्ठाता थे, हाथ में समिधा लेकर श्रद्धापूर्वक महर्षि अंगिरा के पास आये और परमतत्व को जानने की इच्छा प्रकट की–'शौनको ह वै महाशालोऽङ्गिरस विधिवदुपसन: प्रपच्छ। कस्मिन्नु भगवो सर्वमिदं विज्ञातं भवतीति ॥' इसी प्रकार विष्णु पुराण, मत्स्य, वायु पुराणादिकों में एवं स्मृति ग्रन्थों में भी सम्मानपूर्वक उनका उल्लेख हुआ है। ऋषि अंगिरा भी एक आश्रम चलाते थे जिसमें बड़ी संख्या में विद्यार्थी नाना प्रकार की शिक्षा ग्रहण करते थे। अंगिरा ब्रह्म विद्या के ज्ञाता थे। अतः इन्हें ब्राह्मण कहा गया। 'ब्रह्मं जानाति स ब्राह्मणः।'

पौराणिक ग्रन्थों के अनुसार अंगिरा के पुत्र उतथ्य हुए। उतथ्य के मेधातिथ एवं मेधातिथ के पुत्र गौतम हुए। गौतम के पुत्र सतानन्द एवं चिर-कारी हुए। ऋग्वेद में गौतम नाम एक वचन व बहुवचन दोनों प्रकार से प्रयोग हुआ है। ऋग्वेद (1.62.'3, 1.78.2, 1.85.11 एवं ऋग्वेद 4.29.6 आदि) वस्तुत: नाम के बजाय कुल या वंश के नाम से अधिक लोग पुकारे जाते थे। यह आदर सूचक था। आज भी लोग इस प्रकार का प्रयोग करते हैं। यथा–ठाकुर साहब, गौतम जी, दुबे जी, शर्मा जी, सरदार जी इत्यादि। सतयुग से लेकर महाभारत-काल तक गौतम ऋषियों का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद सूक्त 88 मण्डल, देवता मरुद्गण। 'हे जल के इच्छुक गौतम वंशी ऋषियों, तुम्हारे शोभन दिवसों ने आकर तुम्हारे उदक-निष्पादन यज्ञों को सुशोभित किया था। उन्हीं दिनों में गौतम वंशीय ऋषियों ने स्तुति उच्चारण के साथ हव्य देते हुए जल पीने के निर्मित कुआँ ऊपर उठाया था।' 4। यहाँ पर गौतम ऋषि बहुवचन में प्रयोग हुआ है। आगे देखिये–"स्वर्ण निर्मित पहियों वाले रथों पर बैठे हुए धारों वाले लौह-चक्र से युक्त, इधर-उधर धावमान एवं शत्रु संहारक मरुद्गणों को देखकर गौतम ऋषि ने जो स्तोत्र बोला था, वह यही है।' 5।

पौराणिक ग्रन्थों के अनुसार उतथ्य का विवाह चन्द्र की कन्या भद्रा के साथ हुआ था। उतथ्य के पुत्र मेधातिथि हुए। इन्हें अधक भी कहा गया है। मेधातिथि का वेदों की रचना में बड़ा योगदान रहा है। मेधातिथि का

विवाह प्रादोषी नामक कन्या से हुआ। मेधातिथि के पुत्र गौतम हुये। गौतम भी प्रकांड विद्वान थे। उन्होंने न्यायशास्त्र की रचना की एवं वेदों के सूक्त रचे मिथिला जाते हुए श्रीराम महर्षि गौतम के आश्रम पर गये थे। इसका उल्लेख बाल्मीकि रामायण में इस प्रकार है।

तदागच्छ महोतज आश्रमं पुण्यकर्मणः। तारयेनां महाभागाअहल्यां देवरूपिणीम्। राजर्षि विश्वामित्र जी ने कहा–आओ इस पुण्यात्मा के आश्रम में चलें और इस देवरूपिणों अहल्या का उद्धार करो।

शापस्यांतमुपागम्य तेषां दर्शनमागता। राघवौ ततस्तस्याः पादौ जाग्रहत्स्तदा॥

राम के आगमन से शाप का अन्त होते ही वह सबको दिखाई देने लगी। उसे देखते ही राम लक्ष्मण ने प्रसन्न मन से उसके पैर पकड़ लिये।

वस्तुतः गौतम ऋषि सूर्यवंशी क्षत्रिय ऋषि थे। उनका नाम राहुगण था। राम भी सूर्यवंशी थे। अहल्या पतित नहीं थी। किसी कारणवश गौतम से उसका मतभेद हो गया था। जिसका श्रीराम ने समाधान कर दिया था। अन्यथा राम जैसा व्यक्ति अहल्या के पैर छूकर प्रणाम न करता। किसी-किसी ने सूर्यवंशियों का गोत्र गौतम लिखा है। सूर्य को इन नामों से भी पुकारा गया है, यथा–आदित्य, रवि, गौतम, भानुमान, लालित, दिवाकर, धूतकेति, सम्भव, भाष्कर सुवर्णी केन्द्र और मार्तंड।

इनका विवाह काशी के चन्द्र वंशी राजा मुदगल की कन्या अहल्या से हुआ था। यहाँ पर मुद्गल के वंश का कुछ वर्णन देना उचित होगा। विष्णुपुराण में इस वंश का उल्लेख निम्न प्रकार से है–पौरव वंशी राजा अजामीड़ की नलिनी नामक भार्या थी। उससे नील नामक पुत्र हुआ। नील का पुत्र शान्ति, शान्ति का पुत्र सुशान्ति हुआ। उनका पुत्र पुरंजय, और उसका पुत्र ऋक्ष हुआ। ऋक्ष का पुत्र हर्यश्व हुआ, उसका पुत्र मुद्गल हुआ। मुदगल के पुत्र बृहदश्व व दिवोदास हुए और अहल्या नाम की पुत्री थी जिसका विवाह गौतम ऋषि से हुआ था, परन्तु पं० भगवदृत द्वारा लिखित भारत का वृहद् इतिहास भाग दो (इतिहास प्रकाशन मण्डल 9/28 पंजाबी बाग, दिल्ली) में किंचित भिन्नता है। उनका अजमीड़ का वंश वृक्ष निम्न प्रकार है–

राजा अजमीढ़ की दो पत्नियाँ थीं—

- घूमनी पत्नी
  घूमनी से उत्पन्न पुत्रों को दक्षिण पांचाल का राज्य दिया
- नलिनी पत्नी से उत्पन्न पुत्र को उत्तर पांचाल का राज्य दिया
  1. नील
  2. सुशान्ति
  3. पुरुजात
  4. तृक्ष
  5. भृम्यश्व, के पांच पुत्र
     - काम्पिल्य
     - यवोनर
     - संजय
     - मुदगल
       - ब्रहमिष्ट
       - धृयश्व (मेनका से उत्पन्न)
         - दिवोदास पुत्र
         - अहल्या (पुत्री) (गौतम की पत्नी)
           - शतानन्द
             - सत्यधृति
               - कृप (कृपाचार्य)
               - कृपी (द्रोणाचार्य की पत्नी)
     - वृहदिषु

गौतम ऋषि का आश्रम मिथला के राजा जनक (सीरध्वज) के राज्य के अन्तर्गत था। बड़ी संख्या में विद्यार्थी इस आश्रम में रहकर अध्ययन करते थे। राजर्षि जनक समय-समय पर आश्रम में पधारते थे। मेधातिथि के दूसरे पुत्र का नाम श्रृंगी ऋषि था। महाराज दशरथ को प्रौढ़ावस्था में भी जब सन्तान की प्राप्ति नहीं हुई तो उन्होंने अपने कुल गुरु श्री वशिष्ट जी से अपनी चिन्ता प्रकट की। वशिष्ट ऋषि ने महाराज दशरथ को पुत्रेष्टि यज्ञ कराने की सलाह दी और इसका भार श्रृंगी ऋषि को सौंपा जिनका आश्रम ऋगवेरपुर (चित्रकूट के निकट बांदा उ० प्र०) में था। तुलसीदास जी ने भी मानस में कहा है श्रृंगी रिषिहि बुलावा, पुत्र काम सुभ यज्ञ

करावा।' उस यज्ञ के पूर्ण होने पर भगवान् राम ने स्वयम् भाइयों सहित जन्म लिया। इस प्रकार इस कुल (गौतम, सूर्य वंश) का योगदान भगवान राम (सूर्य वंश) के अवतरित होने में भी है। भगवान् राम का विवाह जब जगत् जननी आदि शक्ति माँ सीता जी से हुआ था उस पुनीत अवसर पर गौतम के पुत्र सतानन्द ने ही वैवाहिक कार्यों का सम्पादन वैदिक रीति से कराया था, ऐसा रामायण में पढ़ने को मिलता है। उस शुभ अवसर पर ऋषियों में श्रेष्ठ गुरु वशिष्ट, विश्वामित्र एवं गौतम भी अन्य मुनिजनों सहित उपस्थित थे।

सतानन्द के पुत्र एतानीक हुए। इन्हें सत्यधृत भी कहा गया है। इनके पुत्र शरद्वान हुए। शरद्वान के दो पुत्र हुये, विभांडक व कृपाचार्य। कृपी नाम की एक पुत्री भी हुई। पुराणों में कृपाचार्य एवं कृपी के सम्बन्ध में आख्यान मिलता है। शरद्वान वन में तपस्या एवं धनुर्विद्या का अभ्यास किया करते थे। उनकी तपस्या भंग करने के लिए इन्द्र ने जनपदा नाम की एक देव कन्या को भेजा। शरद्वान गौतम से उस रूपसी देवबाला को ऐसे वस्त्रों में देखा जिससे उसके अंग-प्रत्यंग्य दृष्टिगोचर होते थे। जब जनपदा ने देखा कि शरद्वान इसकी ओर आकर्षित हो चुके हैं तो वह वहाँ से हटकर लताओं की ओट में इस प्रकार से हो गई कि उसके वे वस्त्र भी काटों में उलझकर गिर गये। शरद्वान उसको इस अवस्था में देखकर कामपीड़ित हो गये। जनपदा अपने उद्देश्य में सफल रही। कालान्तर में एक पुत्र व एक पुत्री को जन्म देने के पश्चात् जनपदा चली गई। ये दोनों बालक महाराज शान्तनु की कृपा से परिपोषित हुए। अत: इनका नाम कृपा और कृपी पड़ा। कृपाचार्य की गणना उस समय के महारथियों में की जाती थी। महाभारत युद्ध कौरव पक्ष की ओर से उन्होंने भाग लिया था एवं कौरव सेना में युद्धोपरान्त जीवित बचने वाले दो महारथियों में से एक थे। दूसरे थे द्रोण पुत्र अश्वत्थामा। सत्यधृत के दूसरे पुत्र विभांडक की रुचि अध्यात्म की ओर थी अतः जपतप में लीन रहे। कृपाचार्य के जन्म की घटना का वर्णन गुरुदत्त जी ने भी पुस्तक 'सम्भवामि युगे-युगे' में किया है।

इसी गौतम कुल में एक ऋषि श्रृंग हुए थे। इनकी सन्तानें सेंगर क्षत्रिय कहलाईं। श्री शिवनाथ सिंह सेंगर द्वारा लिखित शिवनाथ भास्कर में सेंगर क्षत्रियों को गौतमों की एक प्रसिद्ध शाखा माना है। अंगरेज इतिहासकार श्री ग्रोस (Growse) ने गौतम क्षत्रियों की जो वंशावली दी है उसमें उसने स्वीकार किया है कि सेंगर गौतमों की शाखा है। स्वर्गीय ठा० प्रताप सिंह सेंगर (मंत्री महाराज बीकानेर एवं सलाहकार जयपुर दरबार) द्वारा

लिखित 'संगरों का इतिहास' में उन्होंने भी यह स्वीकार किया है कि संगर क्षत्रिय गौतम क्षत्रियों की एक शाखा है। कुछ लोगों ने गौतम क्षत्रियों को भ्रमवश ब्राह्मण कहा है। परन्तु यह विचार भ्रामक है। 'ब्रह्मं जनाति सो ब्राह्मण:' के आधार पर कह दिया है। वैसे तो वैदिककाल में कर्म के अनुसार वर्ण का निर्धारण होता था। इस वंश के बहुत से महापुरुष दीर्घकाल तक अध्यात्म में लीन रहे। वैदिककाल में एक पिता की दो सन्तानों में से कोई रुचि के अनुसार क्षात्र धर्म या ब्राह्मण धर्म स्वीकार कर लेते थे। प्रसिद्ध इतिहास-वेत्ता, अन्वेषक कर्नल जेम्स टाड लिखता है–'इस देश में (भारतवर्ष में) प्रारम्भकाल में धार्मिक नेतृत्व आजकल की तरह कुछ लोगों में पैत्रिक नहीं था। बल्कि उस पर सभी का समान रूप से अधिकार था। यह बात में हिन्दुओं के ग्रन्थों के आधार पर लिखने का साहस कर रहा हूँ। सूर्यवंशी इक्ष्वाकु के दस पुत्र थे। उनमें से तीन धार्मिक (ब्राह्मण) हो गये और उन तीन में एक ने अग्निहोत्र लेकर अग्नि की पूजा की थी। उसका एक पुत्र व्यवसायी हो गया था। चन्द्रवंशी राजपूत पुरुरवा के छै: पुत्रों में चौथे का नाम रेहा था। उसकी पन्द्रहवीं पीढ़ी में हारीत हुआ। और वह अपने आठ भाइयों सहित धार्मिक हो गया था। (देखिये विष्णुपुराण)। उसी ने कौशिक गोत्र की प्रतिष्ठा की थी जो कि ब्राह्मणों की एक शाखा है। राजा ययाति की चौबीसवीं पीढ़ी भरद्वाज नाम का राजा हुआ। उसके नाम पर एक गोत्र की स्थापना हुई और उस गोत्र वाले आज भी पुरोहित का कार्य कर रहे हैं। राजा मनु के दो पुत्रों ने धार्मिक वृत्ति लेकर गोत्रों की प्रतिष्ठा की थी। महावीर से उत्पन्न होने वाला पुष्कर अपनी धार्मिक वृत्ति के कारण धार्मिक हो गया और एक ब्राह्मण के नाम से प्रसिद्ध हुआ। आज बहुत से कार्य ब्राह्मणों तक ही सीमित हैं। परन्तु पहले ऐसा न था। हिन्दुओं के ग्रन्थों में इस बात के प्रमाण मिलते हैं कि अनेक सूर्यवंशी और चन्द्रवंशी राजा शासन करते हुए भी ब्राह्मणोचित कार्य करते थे। रामचन्द्र जी के पहले और बाद में भी राजवंश में उत्पन्न होकर ब्राह्मण धर्मावलम्बी होकर धार्मिक कार्य करते थे। शासन और धर्म का कार्य ब्राह्मण और क्षत्रियों दोनों का था। महाभारत काव्य का रचयिता व्यास इन्द्रप्रस्थ के राजा शान्तनु का बेटा था। मिथिला के चन्द्रवंशी राजा जनक (सीरध्वज) के पास ब्राह्मण ज्ञानपिपासा मिटाने हेतु आते रहते थे। कैकय नरेश अश्वपति जनक के समकालीन थे। डा० हेमचन्द्र राय चौधरी लिखते हैं कि अश्वपति एक विद्वान नरेश थे। शतपथ ब्राह्मण व छान्दोग्य उपनिषद् के अनुसार अश्वपति ने कितने ही ब्राह्मणों को पढ़ाया था। जैसे अरुण औपवंशी, सत्ययज्ञ पौलिसी, महाशाल जाबालि,

बुडील, अश्वतराश्वि, औपमन्यव, उद्दालक आरुणि कैकय नरेश के पढ़ाये हुए थे। इतिहास शिरोमणि डा० राधाकुमुद मुखर्जी लिखते हैं कि उपनिषदों में विद्या को ब्राह्मणों की बपौती नहीं माना गया है। उन्होंने अनेक विद्वान् राजाओं और क्षत्रियों की चर्चा की है जिन्होंने ब्राह्मणों तक को दीक्षा दी है। उदाहरणार्थ राजा जनक ने युवक याज्ञवल्क को दीक्षा दी, पांचाल के प्रवाहण जैवाली, काशी के अजातशत्रु और केकय के अश्वपति ने ब्राह्मणों को उपदेश दिया था।

एक स्थान पर प्रसिद्ध विद्वान रांगेय राघव ने अपने उपन्यास पतझर में मीनाक्षी विश्वामित्र संवाद में अपना विचार इस प्रकार व्यक्त किया है—विश्वामित्र कहते हैं—"ये ब्राह्मण सर्वाङ्गीण अधिकार अपने हाथ में लेकर दूसरों को कुचलते रहना चाहते हैं। इनको किसने इतने अधिकार दिये हैं ? वंशों की स्थापना मनु के वंशजों में कर्मानुसार हुई थी न कि जन्मानुसार। तुम नहीं जानते कि हम आर्यों में समस्त क्षत्रियों के गोत्र ऋषियों के ही होते हैं। हम सब ऋषियों की सन्तान हैं। किसी समय गण गोत्र के ऊपर किसी के आक्रमण का भय था और खतरा देखकर कुछ लोगों ने (उन्हीं ब्राह्मणों में से) अन्यों की रक्षा करने के लिए (अर्थात् कुटुम्ब या कबीले की रक्षा करने के लिए) शस्त्र धारण किया था, वही लोग क्षत्रिय कहलाये। परन्तु जो लोग यज्ञ करते रहे यानी ब्राह्मण बने रहे अपने को आयुध धारी ब्राह्मणों यानी क्षत्रियों से ऊँचा समझते हैं। यदि हम लोगों ने शस्त्र न उठाया होता तो उनकी रक्षा न होती।" लंकापति रावण को प्रत्येक हिन्दू जानता है। तुलसीदास जी ने उसके सम्बन्ध में लिखा है "उत्तम कुल पुलस्ति कर नाती शिव विरंचि पूजे बहु भाँती।" रावण पुलस्त मुनि का नाती था परन्तु कर्म से राक्षस कहा गया। वहीं पर रावण का एक भाई कुबेर (जिसकी गणना देवताओं में की गई है) देवताओं का कोषाध्यक्ष था। हिन्दू कुल सूर्य महाराणा प्रताप के पूर्वजों को भी प्रसिद्ध इतिहासकार कर्नल जेम्स टाड एवं विसन्ट ए० स्मिथ ने तथा औरंगजेब के समकालीन प्रसिद्ध इतिहासवेत्ता जोधपुर महाराज के प्रधानमंत्री मेहता नैणसी ने अपनी ख्यात में यही प्रतिपादित किया है। वास्तविकता यह है कि आर्यों में पहले वर्ण व्यवस्था थी जाति व्यवस्था नहीं। धीरे-धीरे वंशानुगत कर्म करते रहने से जाति एवं उपजातियों का पादुर्भाव हुआ। शनैः-शनैः यह व्यवस्था रूढ़िवादिता में बदल गई। स्मरण रहे कि ब्राह्मण और क्षत्रियों के गोत्र लगभग एक ही हैं।

2

अर्गल

जनपद फतेहपुर का गठन अंग्रेजों ने सन् 1826 में किया था। इससे पहले इस जनपद का पूर्वी भाग इलाहाबाद व पश्चिमी भाग कानपुर जिले में सम्मिलित था। इस समय यह जनपद तीन तहसीलों में बँटा हुआ है। इसकी पूर्वी तहसील खागा है। पश्चिमी तहसील बिन्दकी है एवं मध्यवर्ती सदर तहसील फतेहपुर कहलाती है। यह जनपद दो प्रमुख बड़ी नदियों गंगा और जमुना के मध्य में है। कुछ छोटी नदियाँ भी यहाँ बहती हैं। इस्टर्न रेलवे एवं ग्रांटट्रंक रोड भी इस जनपद से होकर गुजरती है। फतेहपुर जनपद के उत्तर में उन्नाव, रायबरेली जनपद है, दक्षिण में बांदा और हमीरपुर हैं। पूर्व व पश्चिम में क्रमश: इलाहाबाद व कानपुर है। मुख्यालय फतेहपुर में है। इसका नामकरण कब और किसने किया स्पष्ट नहीं है। फतहपुर की बिन्दकी तहसील के अन्तर्गत एक ग्राम अरगल (अर्गल) है। बिन्दकी से खजुहा (जो प्राचीन मुगल रोड पर एक ऐतिहासिक स्थान है) होते हुए खजुहा अमौली रोड पर स्थित देवरी बुजुर्ग से एक मील पूर्व की ओर है। यह स्थान अमौली ब्लाक मुख्यालय से पन्द्रह किलोमीटर एवं कोड़ा जहानाबाद से भी लगभग इतना ही दूर पड़ेगा। थाना फिलहाल जाफरगंज है जहाँ पहुँचने का कोई सुगम सीधा मार्ग नहीं है। यह छोटा सा ग्राम रिन्द नदी के किनारे बसा हुआ है जिसके दो पुरवे भी हैं। यही छोटा सा ग्राम कभी अर्गल राज्य की राजधानी था। किंवदन्ती है कि कभी यहाँ पर बावन बाजारें लगती थीं। परन्तु समय के कालचक्र में सब समा गया। यहाँ पर समय-समय पर भाग्यशाली लोगों को धन प्राप्त हो जाता है। पुरानी टूटी-फूटी जंग लगी तलवारें व पुराने मिट्टी के बर्तन खेतों में वर्षाकाल में मिलते रहते हैं। अभी हाल के कुछ वर्षों में भिन्न स्थानों में तीन पुराने कुयें मिले हैं। उनकी सफाई अभी नहीं हुई। सफाई होने पर सम्भव है कुछ ऐतिहासिक सामग्री प्राप्त हो। कभी-कभी पत्थर की मूर्तियाँ भी प्राप्त होती हैं। इन सब बातों से यह स्पष्ट हो जाता है कि कभी यह बड़ा नगर रहा होगा।



अर्गल के ध्वस्त किले के अवशेष

कोड़ा–जहानाबाद

अर्गल ग्राम से दो मील दूर रामपुर ग्राम के निकट रिन्द नदी के किनारे एक बड़ा टीला है। जो वर्षा ऋतु में नदी की बाढ़ से सदा कटता रहता है। इस टीले को लोग सीकरी कोट के नाम से पुकारते हैं। यहाँ पर अर्गल नरेशों का किला था। कोड़ा (मुगल रोड पर स्थित एक मुगलकाल का प्रसिद्ध स्थान) में भी एक किले के ध्वंसावशेष अब भी हैं। यह किला भी अर्गल नरेशों का था। सीकरी कोट नामक टीले में कुछ वर्ष पूर्व दो तोप के गोले भी मिले थे जिसमें एक छोटा और दूसरा बड़ा था। इस टीले में कुछ मूर्तियाँ भी मिली थीं जो बाद में चोरी चली गईं। इसी प्रकार नरैचा ग्राम के निकट भी रिन्द नदी के किनारे एक टीला गढ़ी के नाम से प्रसिद्ध है। इस टीले के सम्बन्ध में यह प्रसिद्ध है कि यहाँ पर खजाना है और यह कि एक पण्डित जी को उसके अन्दर प्रवेश करने का मार्ग मालूम था और आवश्यकतानुसार पण्डित जी वहाँ से धन ले आते थे। उनकी मृत्यु लगभग 70–75 वर्ष पूर्व हो गई। एक दूसरा नरैचा गाँव बिन्दकी तहसील के अन्तर्गत है। यह यमुना नदी के निकट है। यहाँ पर भी एक किले के ध्वंसावशेष हैं। यह किला भी अर्गल नरेशों का कहा जाता है। सौंह महरहा में भी एक किले के ध्वंसावशेष कुछ समय पूर्व तक थे। कैप्टेन शूरवीर सिंह (महराजा टेहरी गढ़वाल के परिवार में जन्मे, देशभक्त एवं इतिहास प्रेमी) जब फतेहपुर में डी० पी० ओ० के पद पर थे तो उन्होंने इन स्थानों का दौरा कर जनश्रुति और जिला गजेटियर्स के अध्ययन पर आधारित लेख लिखकर यह प्रतिपादित किया था कि ये किले अर्गल नरेशों के ही हैं। इस प्रकार से अर्गल नरेशों ने सुरक्षा की दृष्टि से थोड़े-थोड़े फासलों पर ये किले बनवाकर एक प्रकार से चौकियाँ स्थापित की जो कि एक जंजीर (अर्गला) के सदृश्य प्रतीत होती है। बहुत सम्भव है अरगल (अर्गल) का नामकरण इसी आधार पर हुआ हो।

'कानपुर का इतिहास'—लेखक श्री लक्ष्मीकान्त त्रिपाठी एवं श्री नारायण प्रसाद अरोड़ा (दोनों ही इतिहास के प्रवक्ता) भूमिका लेखक श्री डा० रामप्रसाद त्रिपाठी अध्यक्ष, इतिहास विभाग, प्रयाग विश्वविद्यालय में भी अर्गल का संक्षिप्त उल्लेख है। विद्वान् इतिहासकारों ने लिखा है—"**अर्गल का गौतम राजवंश**——वर्तमान फतेहपुर जिले में कोड़ा जहानाबाद के पास अर्गल एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक स्थान है। यहाँ के गौतम राजा दिल्ली के मुसलमानों के समय से ही अपने वैभव व बाहुबल के लिए विख्यात रहे हैं। कानपुर जिले के दक्षिणी भाग में पाये जाने वाले बहुत से मन्दिरों में इस राजवंश की स्थापत्य कला की छाप स्पष्ट दिखाई पड़ती है। इन मन्दिरों

से इस प्रदेश में अत्यन्त प्राचीन हिन्दू सभ्यता का प्रमाण मिलता है। किवदन्ती के अनुसार फतेहपूर जिले में स्थित अर्गल के गौतम राजाओं ने इसका प्रसार किया था। अर्गल का राजवंश निःसन्देह बहुत प्राचीन है। अब से लगभग साढ़े पाँच सौ वर्ष पूर्व अर्गल के कुछ गौतम परिवार इस जिले की भूमि में आकर बस गये। अर्गल के एक गौतम वंशीय सरदार जिनका नाम बहराम शाह था, ने गंगा के तट पर विपोसी को अपना केन्द्र बनाया। यह ठिकाना बहुत दिन न चल सका और नष्ट-भ्रष्ट हो गया। विपोसी को अब नजफगढ़ कहते हैं। नरवल के पास चिल्ली नामक गाँव में गौतमों का एक दूसरा परिवार स्थापित हुआ। उसके स्वामी राना कहलाते थे। उनके पास पाण्डव रिन्द नदियों के बीच चौबीस गाँव थे। सीसपुर और रायपुर में गौतमों की तीसरी बस्ती पाई जाती है। इन लोगों के पास बारह गाँव थे। कई अन्य गाँवों में गौतमों की बस्तियाँ हैं।"

"विद्वत् द्वय ने आगे लिखा है—"कानपुर जिले के कई स्थानों पर बौद्धकालीन मूर्तियाँ तथा उस समय की अन्य वस्तुएँ प्राप्त होती हैं। मकन-पुर का समीपवर्ती....नामक स्थान जो कि मकनपुर से केवल तीन मील दूर है प्रसिद्ध बौद्ध विद्वान महापण्डित राहुल सांकृत्यायन के अनुसार बौद्धकाल में अलम्बिकापुर कहलाता था जहाँ एक बार महात्मा गौतम बुद्ध ने चातुर्मास वास किया था। मकनपुर तथा अरौल के बीच एक और स्थान हरपुरा है। उसमें पुराने समय की बहुत सी प्रस्तर मूर्तियाँ मिलती हैं। इनसे विदित होता है कि सम्भवतः प्राचीनकाल में वहाँ पर कोई बौद्ध मठ या विहार रहा होगा। काकूपुर के आस-पास भी अनेक पुराने मन्दिरों के भग्नावशेष हैं और पुरानी मूर्तियों के खण्डित अंग और पत्थर की चौखटों के खण्ड इधर-उधर टीलों तथा अन्य स्थानों पर बिखरे मिलते हैं। उनमें से कुछ तो अवश्य बौद्धकालीन हैं और खण्डित रूप में भी अपने पूर्व सौन्दर्य का परिचय देते हैं। यह विध्वंसक कार्य या तो अलाउद्दीन खिलजी के समय का है अथवा नासिरुद्दीन के कार्यकाल का जब उसके मंत्री गयासुद्दीन बलवन (जो बाद में दिल्ली की गद्दी पर बैठा) ने अर्गल पर कई आक्रमण किये थे। सुप्रसिद्ध इतिहासकार जनरल कनिंघम ने काकूपुर के आस-पास के इन स्थानों का भ्रमण कर यह अनुमान किया था कि सम्भवतः बौद्धकाल में यहाँ कोई विहार रहा होगा। वे इस स्थान से इतना अधिक प्रभावित थे कि उन्होंने काकूपुर को चीनी यात्री ह्वेनसांग द्वारा वर्णित 'अय्युतो' मान लिया था। उनके अनुसार तिब्बत के ग्रन्थों में उल्लिखित 'बागुड़' नामक स्थान भी यही है। इसी प्रदेश के आस-पास 'उदुम्बर' नामक स्थान भी कहीं रहा है।

जिसका उल्लेख बौद्ध ग्रन्थों में है। कान्यकुब्ज (कन्नौज) और अरगलपुरी (अर्गल अब फतेहपुर जिले में) के बीच में यह स्थान भगवान गौतम बुद्ध के समय में था। भगवान गौतम बुद्ध का समय ईसा से लगभग पाँच सौ वर्ष पूर्व माना जाता है। इस प्रकार गौतम बुद्ध को हुए 2500 वर्ष में से अधिक हो चुके हैं और उस समय अरगलपुरी अथवा अर्गल विद्यमान था। यह अर्गल की प्राचीनता का द्योतक है। भगवान गौतम बुद्ध एवं अर्गल नरेश एक ही कुल, वश व गोत्र के हैं। अत: यह बहुत सम्भव है कि महाराज अर्गल के आग्रह पर वे इधर पधारे हों और चातुरमास व्यतीत किया हो। उनके प्रति श्रद्धा, सम्मान व आस्था प्रकट करने के लिए उक्त विहार या मठों का निर्माण अर्गल नरेशों द्वारा कराया गया हो। ज्ञात हो कि कानपुर जनपद किसी समय अर्गल नरेशों के राज्यान्तर्गत था। केवल कानपुर ही नहीं वरन् उन्नाव, रायबरेली, बाँदा और हमीरपुर जनपदों के बड़े भू-भाग अर्गल राज्य के अन्तर्गत थे।"

अर्गल नरेशों की राजधानी को लेकर इतिहासकारों में मतभेद है। कुछ इतिहासकारों का मत है कि अर्गल की राजधानी कोड़ा में थी। इसका अनुमान वे इस बात से करते हैं कि वहाँ पर अब भी एक किले के ध्वंसावशेष पाये जाते हैं। वह भी रिन्द नदी के किनारे पर है। दूसरा कारण यह कि कोड़ा में आज भी एक मुहल्ला है जिसे अरगलिया टोला कहा जाता है। मुगल शासनकाल में कोड़ा एक प्रमुख स्थान था। यह असम्भव नहीं कि दिल्ली के इस्लामी शासकों ने कोड़ा पर कब्जा कर वहाँ से अर्गल नरेशों को हटने पर बाध्य कर दिया हो। कहा जाता है कि अर्गल का पूर्ववर्ती नाम महाकाया था और भारत के प्रमुख पवित्र तीर्थस्थलों में से एक था। 'रेणुक:' शूकरा, काशी, कलिंग, बटेश्वर, कालिंजर, महाकाया, ऊखलं नवमुक्तिद: ॥ श्री एच० आर, नेविल आई० सी० एस०, प्रो० आर० जी० एस०, पी० एस० एस० फतेहपुर गजेटियर में लिखते हैं—

His grand son is said to have made the fort of Argal on a site formarly called 'Mahakaya, a small secluded village among the ravines of the Rind; but there are no extensive ruins at this place, such as might be expected at a spot which for many centuries was the capital of an independent principality, and it is possible that their original home was the fort of Kora, which is still called Argal, and that the same name was subsequently given to the more remote village.

(कहा जाता है कि उसके पौत्र ने रिन्द नदी की घाटियों में स्थित एक एकान्तिक ग्राम जो पहले महाकाया नाम से पुकारा जाता था के स्थल पर अर्गल के किले का निर्माण कराया था परन्तु वहाँ अब ऐसे विस्तृत भग्नावशेष उपलब्ध नहीं हैं जैसे उस स्थान पर होने की आशा की जा सकती है जो अनेक शताब्दियों तक एक स्वतन्त्र राज्य की राजधानी रहा हो। यह सम्भव है कि उनका मूल स्थान कोड़ा रहा है जिसे अब भी अर्गल कहा जाता है और बाद में उस दूरस्थ एकान्त ग्राम का भी वही नाम रख दिया गया हो।)

3

अर्गल नरेशों का वंश

पुराणों, ब्राह्मण ग्रन्थों आदि के अध्ययन से यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रथमतः एक ही वंश सूर्य वंश था। आर्य जन सभी ऋषियों की ही सन्तानें हैं। परम्परागत कर्म-व्यवस्था पर आधारित वर्ण-व्यवस्था शनैः-शनैः क्षीण होकर जाति व्यवस्था में परिणत हो गई। उस काल से (वैदिक) आर्य ही सम्बोधन शब्द था। जिससे गरिमा प्रकट होती थी। इस विषय पर पिछले पृष्ठों में लिखा जा चुका है। दो वंश ही मुख्य रूप से माने गये हैं। सूर्य वंश की दूसरी शाखा चन्द्रवंश है। जिस प्रकार मनु पुत्र इक्ष्वाकु से सूर्यवंश चला उसी प्रकार मनु की पुत्री इला से चन्द्रवंश चला। फिर इनमें अनेकों शाखायें-प्रशाखायें प्रकट हुईं। मनु के कई पुत्र ऋषि हो गये। उनके भी वंश चले। परन्तु अनेक लोगों ने उन्हें सूर्यवंशीय ही माना है। जब भारतवर्ष में विदेशियों के आक्रमण प्रारम्भ हुए तब अग्निवंश का प्रादुर्भाव हुआ। कहा गया है 'दस रवि सों, दस चन्दसों द्वादस ऋषि प्रमान, चार हुतासन सों भये वंश छत्तीस प्रमान।' कर्नल टाड ने जो छत्तीस राजवंशों की सूची दी है उसमें उन क्षत्रियों को ही रक्खा है जो मुख्यत: राजस्थान में पाये जाते थे। इसी प्रकार रासो कर्त्ता ने भी अपनी इच्छानुसार चयन किया है। गौतम क्षत्रियों को कुछ लोगों ने ऋषि वंशी माना है जबकि अनेक लोगों ने सूर्यवंशी माना है। अजयगढ़ के स्वर्गीय महाराजा रणजोर सिंह जी द्वारा क्षत्रिय वंशावली में निम्न क्रम दिया है—

16 कुल सूर्य वंश में यथा—1—सूर्यवंशी 2—रघुवंशी 3—डांगे 4—कछवाहे 5-बडगूजर 6—सरहवार 7—दिखित 8—सिरवेत 9—सीसौदिया 11—गहरवार 11—करचुली 12—बौदा 13—कनौजिया 14—बिलकैत 15—चमरगौर 16—राठौर।

4 कुल चन्द्रवंश में यथा—1—गहरवार 2—चन्देल 3—सोमवंशी 4—तौर।

3 कुल ऋषिवंश में यथा–1–गौतम 2–सेंगर और 3–विसेन ।

2 कुल नाग वंश में यथा–1–पायक 2–वैश्य ।

11 कुल अग्नि वंश में यथा–1–चौहान 2–सोलंकी ३–नाहर ४–बघेल 5–गहलौत 6–नदवान 7–खंगार 8–परिहार 9–प्रमार 10–खंडेत 11–भदौरी ।

इन्होंने छठा वंश दैत्यवंश माना है यथा–1–निकुम्भ 2–निवार 3–कटोच 4–कटियार 5–अमेठिया 6–काठी 7–जेठवा 8–डोंड 9–सिकरवार 10–दाहिमा 11–मोहिल आदि ।

दस रविसों, दस चन्द्रसों ' के अनुसार क्षत्रियों को केवल चार वंशों में ही विभक्त किया है । वहीं पर महामहोपाध्याय पं० हरिप्रसाद शास्त्री ने निम्न प्रकार से उसका वर्गीकरण किया हैं यथा–सूर्यवंश में 1–गोहिल (सीसोदिया) 2–सिकरवार 3–वडगूजर 4–कछवाह 5–वनाफर 6–गहरवार 7–राठौर 8–वडेल बुन्देला 9–बघेल 10–सरनेत 11–निकुम्भ 12–छीड़ो ।

चन्द्रवंश में–यादव 2–गौड़ 3–कावा 4–कौरव (चन्देल) 5–भाटी 6–कांवरा 7–तंवर 8–सोरठा 9–कठारिया 0–सोमवंशी ।

ऋषिवंश में–1–गौतम 2–सेंगर 3–विसेन 4–चमरगौर 5–बह्मन गौर 6–भट्ट गौर 7–राजगौर 8–दीन दीक्षित 9–दीक्षित 10–बिलकेत 11–विलखरिया 12–कनपुरिया ।

यज्ञ वंश में–1–परिहार 2–सोलंकी 3–चौहान 4–प्रमार ।

मतिराम ने 36 राजकुल इस प्रकार गिनाये हैं यथा–सूर्यवंश 2–पैलवार 3–राठौर 4–लोहथम्म 5–रघुवंशी 6–कछवाहा 7–सिरमौर 8–गहलौत 9–बघेल 10–कावा 11–सिरनेत 12–निकुम्भ 13–कौशिक 14–चंदेल 15–यदुवंशी 16–भाटी 17–तोमर 18–वनाफर 19–काकन 20–वैश 21–गहरवार 22–करमवार 23–रैकवार 24–चन्द्रवंशी 25–शकरवार 26–गौर 27–दीक्षित 28–वडवलिया 29–विश्वेन 30–गौतम 31–सेंगर 32–उदवटिया 33–चौहान 34–पडिहार 35–सुलंकी 36–परमार ।

इन वंशावलियों में भिन्नता है । ऐसा प्रतीत होता है कि काल और स्थान भेद के कारण उक्त भिन्नता पैदा हो गई है । बूँदी के प्रसिद्ध वंशावली वेत्ता स्वर्गीय सूर्यमल्ल जी वड़वा न वंश भास्कर नामक ग्रंथ की रचना की थी जो बड़ा प्रमाणिक माना जाता है । उक्त ग्रंथ में उन्होंने गौतम क्षत्रियों को सूर्यवंशी माना है । सुप्रसिद्ध इतिहासकार एवं जोधपुर के महाराज जसवंत सिंह जी के मंत्री (औरंगजेब के समय थे) मेहता नैणसी द्वारा रचित नैणसी री ख्याति' (इतिहास में इस पुस्तक को आइने अकबरी के समकक्ष माना गया है) में गौतम राजपूतों को सूर्यवंशी भगवान राम के

वंशज माना है। क्षत्रिय वंशावली के रचयिता श्री ठा० उदयनारायण जी ने गौतम क्षत्रियों को सूर्यवंशी माना है। उनका वर्णन इस प्रकार है–

गौतम-सूर्यवंश, गोत्र-गौतम, प्रवर पाँच (गौतम, आंगिरस, अप्यसार, वार्हस्पह्य, ध्रुव) कुलदेवी–चामुण्डा, कुल देवता श्री अर्गलेश्वर महादेव जी, वेद–यजुर्वेद शाखा बार्जसनेयी, सूत्र–पारस्करगृह्य सूत्र। डा० इन्द्र देव-नारायण सिंह जी रचित क्षत्रिय वंश भाष्कर में भी उपर्युक्त वर्णन मिलता है। क्षत्रिय वंश प्रकाश बीकानेर वंशावली, अवध का इतिहास, भारत के प्राचीन राजवंश, सेंगरों का इतिहास आदि अनेक ग्रन्थों में गौतम क्षत्रियों को सूर्यवंशी भगवान राम का वंशज माना है। ज्ञातव्य हो कि सीसौदिया, गहलौत, कछवाहे राठौर आदि भी अपने को अवधेश श्री रामचन्द्र जी का वंशज मानते हैं एवं उनका गोत्र भी गौतम है।

विष्णुपुराण में गौतम क्षत्रियों को श्री राम के पुत्र कुश की शाखा में माना है। इसी शाखा में आगे चलकर कपिलवस्तु नरेश शाक्य, सुद्धोधन और फिर भगवान् गौतम बुद्ध हुए। विष्णुपुराण में इक्ष्वाकु से लेकर भी राम तक, फिर उनके पुत्र कुश से लेकर तथागत भगवान बुद्ध से पाँच-छः पीढ़ी तक की वंशावली दी हुई है। प्राचीन भारत का राजनैतिक इतिहास लेखक हेमचन्द्र राय चौधरी लिखते हैं कि बौद्ध ग्रन्थ सुत्तिनिपात में महात्मा बुद्ध कहते हैं कि–"हिमवंत के बिलकुल पास स्थित कोशल प्रदेश के रहने वाले लक्ष्मी सम्पन्न हैं। ये लोग वंश से आदिच्छ (सूर्यवंशी) तथा जन्म से शाक्य हैं। यहीं के एक परिवार से मैं परिभ्रमण के लिए निकला हूँ। तथा-गत बुद्ध ने स्वयम् ही अपने को इक्ष्वाकु वंश की शाक्य शाखा का माना है है तथा कोशल (अयोध्या) परिवार का एक सदस्य कहा है। मज्फिम निकाय (बौद्ध ग्रन्थ) में भी बुद्ध को कोशल का ही कहा गया है।

अमेरिकन लेखक पाल कारस अपनी पुस्तक 'दिगास्पेल आफ बुद्ध' में लिखता है–

There was in Kapilwastu a Shakya King, strong of puspose and reverenced by all men, a descendant of the Ikshwakee, who (call them-selves Gautam, and his name was Suddodhan or (Pure Rice). His son was Sidharth (Lord Buddha).

(कपिलवस्तु में शुद्धोधन नाम के एक दृढ़ संकल्प वाले सर्वसम्मान्य इक्ष्वाकु वंशीय राजा थे जो अपने को गौतम कहते थे। उनके पुत्र का नाम सिद्धार्थ–(भगवान् बुद्ध) था।)

रामायण के अनुसार कोशल के राजाओ के पूर्वज इक्ष्वाकु थे। इक्ष्वाकु के ही वंशज कुशीनगर, कपिलवस्तु, श्रावस्ती एवं वैशाली में राज्य करते थे। इक्ष्वाकुओं की एक शाखा ने मध्यभारत की ओर जाकर एक अन्य कौशल राज्य स्थापित किया था। शाक्य राज्य की उत्तरी सीमा पर हिमालय की पर्वत श्रेणियाँ थीं। पूर्वी सीमा पर रोहिणी नदी (राप्ती की एक सहायक नदी) बहती थी। पश्चिम व दक्षिण दिशा में राप्ती नदी बहती थी। श्री गौरीशंकर चटर्जी एम. ए. द्वारा लिखित ग्रन्थ (हर्षवर्धन) से ज्ञात होता है कि चीनी यात्री ह्वेनसांग ने हर्ष के काल में कपिलवस्तु को स्वतन्त्र राज्य माना है।

राजस्थान के प्रसिद्ध इतिहासकार मेहता नैणसी ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'नैणसी से ख्यात' में चित्तौड़ के राणाओं के पूर्वजों की सूची दी है। उसमें आठवें नम्बर पर गौतमादित्य नाम है। स्मरणीय है कि चित्तौड़ का राणावंश (गहलौत, सिसौदिया) भगवान राम के वंशज सूर्य कुल के हैं। गौतम + आदित्य = गौतमादित्य। आदित्य सूर्य के लिए प्रयोग होता है। आदित्य संस्कृत शब्द है। आगे चलकर नैणसी ने कुशवाहों की सूची दी है। कुशवाहे भी सूर्यवंशी हैं। उस सूची में भी गौतम नाम आया है। सूर्यवंश की बहुत सी शाखायें हैं परन्तु उनके पूर्व पुरुष एक ही हैं। मूल वृक्ष से जो महत्वपूर्ण शाखायें समय-समय पर फूटी उन्होंने पृथक् नाम रखकर (अपनी विशिष्ट पहचान के लिए) कुल चलाये और राज्य स्थापित किया। न केवल मेहता नैणसी ने वरन कर्नल टाड एवं विंसेंट स्मिथ ने भी मेवाड़ के राणाओं को ऋषि वंश (जिसे भ्रमवश लोग ब्राह्मण समझते हैं) कहा है।

भगवान् राम के समय से कुछ पहले से ही शृगी ऋषि जो ऋषि गौतम के सहोदर भाई एवं मेधातिथि के पुत्र थे, का आश्रम शृंगवेरपुर में था। शाक्य लोग उस आश्रम में आते-जाते रहते थे। दीर्वकाल तक उस आश्रम से सम्पर्क बने रहने के कारण सूर्यवंशियों की वस्ती भी बस गई और एक प्रकार से उनका उप निवेश बन गया था। गौतम बुद्ध के पश्चात् कौशल के प्रसेनजित के पुत्र विरुद्धक (जिसने वलपूर्वक कौशल की गद्दी हथिया ली) ने कपिलवस्तु पर आक्रमण कर वहाँ के शाक्यों (गौतमों) का नरसंहार किया था। इतिहासकारों ने लिखा है कि शाक्यों ने इसका प्रतिरोध नहीं किया था अत: कपिलवस्तु का पूर्णतः विध्वंश हो गया था। नरसंहार से जो लोग वच गये थे वे इधर उधर भागे। कुछ लोग भागकर शृंगवेरपुर भी आये जहाँ से उनका पूर्व सम्पर्क था। राजकुमार अमृतोधन के पुत्र पाण्डु भी उनमें से एक थे। कालान्तर में शक्ति अर्जित कर उन्होंने अर्गल की

स्थापना कर एक राज्य कायम किया। कुछ लोग जनश्रुति के आधार पर यह भी कहते हैं कि दिल्ली पति अनंगपाल प्रथम ने अपनी पुत्री का विवाह श्रृंगी ऋषि से कर दिया था और कन्नौज से लेकर कड़ा (इलाहाबाद जिले में) तक का राज्य दहेज में दे दिया था। अनंगपाल प्रथम के 8–10 पीढ़ी बाद अनंगपाल तोमर द्वितीय हुआ है जिससे दिल्ली का राज्य पृथ्वीराज चौहान को प्राप्त हुआ था। परन्तु यह मान्यता बुद्धिग्राह्य नहीं है।

उत्तर प्रदेश के राजपूतों के इतिहास की खोज में संलग्न सूबेदार भगवानदीन सिंह लिखते हैं कि इस वंश का उल्लेख बौद्ध ग्रन्थ दीर्घ निकाय एव दिव्यावदान तथा अमरकोष और अंगरेज इतिहासकार कुक के लेखों में मिलता है। इन्होंने गौतमों की कुछ और शाखाओं जो उ० प्र० के पूर्वी जिलों एवं बिहार में पाई जाती हैं का उल्लेख किया है यह कण्डवार, अन्दैया और गोनिहा। डा० सत्यनरायन दुबे लिखते हैं कि वर्मा में प्रचलित जन-श्रुति है कि तथागत बुद्ध से बहुत पहले शाक्य वंश (गौतम वंशीय) के एक राजकुमार अभिराज ने वर्मा के ऊपरी प्रदेश पर आक्रमण किया था और उसे जीतकर एक राज्य स्थापति किया था जो कई पीढ़ियों तक कायम रहा। उसी अभिराज ने इरावदी के किनारे सकिसा नामक नगर की स्थापना की थी। बुद्ध के समय में भी क्षत्रियों के एक दल ने गंगा घाटी से वर्मा पहुँचकर राज्य स्थापित किया था। डा० आर० सी० मजूमदार के अनुसार मलय प्रायद्वीप में भी एक गौतम राजा का उल्लेख मिलता है।

'क्षत्रिय वंशार्णव (लेखक सूबेदार भगवानदीन सिंह सोमवंशी) के आधार पर गौतम क्षत्रिय सूर्यवंश की एक प्रसिद्ध शाखा से है। सूर्यवंश से इक्ष्वाकु वंश, इक्ष्वाकु वंश से काकुत्स्य वंश और उसमें आगे चलकर रघुवंश की शाखा निकली। रघुकुल में ही मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्री राम अव-तरित हुए। कौशलेश श्री राम के पुत्र कुश ने, कहा जाता है कुशावती राज्य स्थापित किया था। इसकी एक शाखा के राजा विशाल ने वैशाली राजवंश की स्थापना की। इसी कुल में राजा शतशुक्र हुए। शुक्रगत के वंशज राजा गौतम थे। इन्हीं राजा गौतम के वंशज गौतम क्षत्रिय कहलाये। कुछ लोगों का मत है कि गौतम ऋषि ने श्री रामचन्द्र जी को जब वे उनके आश्रम पर गये थे, गौतम गोत्रीय कहकर सम्बोधन किया था। अत: रघुवंशियों और कुश के वंशजों ने गौतम गोत्र धारण कर लिया। जिससे एक शाखा गौतम नाम से प्रसिद्ध हुई। गौतम वंशजों की एक शाखा शाक्य बंश से चली। इसी शाक्य कुल में कपिलवस्तु के राजा शुद्धोधन हुए जिनके पुत्र सिद्धार्थ बाद में भगवान् गौतम बुद्ध के नाम से विश्व प्रसिद्ध एवं पूज्य हुए।

दशरथ के पिता आज के समय में रघुकुल के एक विद्वान् महात्मा श्रृंगी ऋषि थे जिन्होंने अयोध्या से चलकर श्रृंगवेरपुर में अपना आश्रम एवं सूर्यवंशियों का एक उपनिवेश स्थापित किया था। उन्होंने दशरथ की पुत्रेष्टि यज्ञ भी सम्पन्न कराई थी और वनगमन के समय रामचन्द्र जी उनके आश्रम पर गये भी थे। (विदित है कि गौतम और श्रृंगी ऋषि भाई-भाई थे) उक्त आश्रम से सूर्यवंशियों का सम्बन्ध बराबर बना रहा और बाद में वहाँ पर एक राज्य की स्थापना भी की। श्रृंगी ऋषि से जो वंश चला वह सेंगर क्षत्रिय कहलाये। (कुछ लोगों की मान्यता है कि ऋषि श्रृंग से जो वंश चला वह सेंगर कहलाये ऋषि श्रृंग भी सूर्य वंशी गौतम कुल के ही थे)।

कालान्तर में वैशाली राज्य के एक गौतम वंशी क्षत्रिय ने श्रृंगवेरपुर के सूर्यवंशी उपनिवेश में जाकर अपना निवास बनाया। विद्वानों द्वारा इस प्रथम गौतम राजा के श्रृंगवेरपुर आने का सन 644 ई० के लगभग बताया जाता है। इसकी छठीं पीढ़ी को गौतमवंशी राजकुमार पाण्डु ने वहाँ से चलकर अर्गल नामक राज्य की स्थापना जनपद फतेहपुर उ० प्र० में सन् 794 में की और गौतम कुल का राज्य स्थापित किया। गौतम वंशीय इस प्रथम राजा का विवाह कन्नौज के गहरवार नरेश अजयचन्द्र की राजकुमारी के साथ सम्पन्न हुआ। कुछ विद्वान् इससे सहमत नहीं हैं। किन्तु इस विवाह की सत्यता प्रमाणित करने के लिए हमें गहरवारों की वंशावली देखना होगा। गहरवार वंशावली के अनुसार राजा अजयचन्द्र कन्नौज के राजा जयचन्द्र से सोलह पीढ़ी पहले हुआ था। जयचन्द्र का अन्त 1194 ई० में हुआ। यदि प्रति पीढ़ी औसतन पच्चीस वर्ष की मान ली जाय तो सोलह पीढ़ी का समय चार सौ वर्ष होता है। यदि 1194 में 400 घटा दिया जाय तो 794 होता है जो कि कन्नौज के राजा अजयचन्द्र का कार्यकाल प्रमाणित करता है और यही समय अर्गल के गौतम नरेश पाण्डु का भी है। इससे गौतम नरेश का कन्नौज के गहरवार राजकुमारी से विवाह होना सिद्ध हो जाता है।

इस प्रकार गौतम क्षत्रियों का निवास विकास और उनकी शाखाओं का फैलाव गंगा और यमुना के मध्य से हुआ और हो रहा है। गौतमों के सम्बन्ध में और कई प्राचीन लेख हैं। गौतम क्षत्रियों के सम्बन्ध में कुछ ऐतिहासिक तथ्य इस प्रकार हैं–

(क) गौतम वंश सूर्य वंश की एक शाखा है। गौतम वंश प्रसिद्ध सात गोत्र ऋषियों में हैं जिनकी ऋषि परम्परा से यह वंश चला आ रहा है।

अतः इन्हें ऋषि वंशी भी कहा जाता है। यह ऋषि वंश ब्राह्मण नहीं वरन् क्षत्रिय हैं। राजर्षि और ब्रह्मर्षि में अन्तर है।

(ख) शाक्य लोग गौतम वंशी क्षत्रिय हैं। जो शाक्य प्राचीन वैदिक धर्म को मानते रहे और बौद्ध धर्म को ग्रहण नहीं किया उनकी शाखा अपने प्राचीन गोत्र गौतम नाम से प्रसिद्ध हुई। बौद्ध ग्रन्थ 'दीर्घ निकाय' के अनुसार शाकबन में निवास करने से यह शाखा शाक्य नाम से प्रसिद्ध हुई। इसकी राजधानी कपिलवस्तु में थी।

(ग) 'दिव्यावदान' नामक बौद्ध ग्रन्थ के अनुसार शाक्यों की एक शाखा लिय वंश है जिनका निवास गोरखपुर जनपद में है। 'अमरकोष' के लेखानुसार शाक वृक्ष (शाल वृक्ष) के क्षेत्र में रहने के कारण शाक्य कहलाये। उनका निवास कमल सागर (हिमालय की तलहटी) में था। ये लोग गौतम कुल की शाखा हैं। इसी शाखा में गौतम बुद्ध ने जन्म लिया। इन क्षत्रियों का वंश और गोत्र दोनों ही गौतम हैं। ये सूर्य वंश के श्री रामचन्द्र जी के पुत्र कुश के वंशज हैं। उनका विकास फैलाव व निवास उसी प्रकार है जैसा कि अन्य क्षत्रियों का है। इनका विकास देश में इतने अधिक स्थानों में है कि उनका उल्लेख विस्तार भय से यहाँ सम्भव नहीं है। किन्तु कुछ स्थानों का विवरण इस प्रकार है–

इस वंश की उपाधि में राजा, राना, राव और रावत हैं। फतेहपुर में 150 ग्राम, प्रतापगढ़ में 10 ग्राम विहार के सोनपुर क्षेत्र में 17 ग्राम, परगवा करण्डा सैदपुर में 7 ग्राम, फैजाबाद में 5 ग्राम, वस्ती में 52 ग्राम, गोंडा में 2, इलाहाबाद में 5, रायबरेली में 3, बाँदा में 10 एवं हमीरपुर में 4 ग्राम बतलाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त कानपुर, इटावा, आगरा, एटा, मुरादाबाद, फर्रुखाबाद, बिहार के आरा, छपरा, दरभंगा मध्यप्रदेश के रायपुर आदि कई स्थानों में गौतम क्षत्रिय अधिक संख्या में पाये जाते हैं। वस्ती उ० प्र० में पिपरा नगर क्षेत्रों में गौतम बड़ी संख्या में हैं। पिपरा की एक शाखा चन्द्रपुर में, अर्गल की एक शाखा रायनगर भोजपुर में तथा गाजीपुर के गोसन्देपुर, इन्दौर, दीनापुर क्षेत्र में इनका निवास है। गौतमों की शाखा कन्द-हार छपरा में 13 ग्रामों में और अनेमा बलिया में निवास करती है। गौतमों की एक शाखा सारन (विहार) में डा० दुरवल सिंह के वंशज सन् 1661 में औरंगजेब के आक्रमण करने पर अर्गल से सारन आये जहाँ सोनपुर प्रखण्ड में इनके 18 ग्राम हैं।

गौतमों का गोत्र–वैदिक काल से क्षत्रियों के गोत्र वे ही माने जाते आ रहे हैं जैसे वैदिक सूत्रों में बताये गये हैं। और उन गोत्रों की स्मृति वे आज भी बनाये चले आ रहे हैं। वेदों के कई सूत्रों में वर्णित गोत्र और प्रवर की स्मृति से आर्य जाति के लोग अपनी वंश परम्परा का ज्ञान बनाये हुए हैं। प्रत्येक धार्मिक कार्य के प्रारम्भ में पुरोहित द्वारा उनका उच्चारण किया जाता है। लेकिन पुरोहित एवं यजमान की अज्ञानता के कारण गलत उच्चारण होता है या फिर किया ही नहीं जाता। राजे-महराजे अपने शिलालेखों में इन्हें उत्कीर्ण कराते थे। विद्वान् इतिहासकार श्री चिन्तामणि विनायक वैद्य ने इस सम्बन्ध में अपनी कृति 'हिस्ट्री आफ मिडाइयल हिन्दू इण्डिया–राजपूत' में विस्तार से लिखा है कि राजपूतों के गोत्र वंश परम्परा से होते हैं न कि गुरु-शिष्य परम्परा से क्योंकि गुरु तो बदलते रहते हैं जैसा कि पुराणों से ज्ञात होता है। परन्तु गोत्र नहीं बदलता। यह सही है कि ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्यों के गोत्र बहुत कुछ मिलते जुलते हैं। इसका कारण यह है कि वैदिककाल से आर्य जाति एक थी। जाति-प्रथा का प्रचलन बाद में हुआ। वैदिककाल में कर्म के अनुसार अपनी जाति बदल लेते थे। धीरे-धीरे इसमें रूढ़वादिता आ गई और कर्म के स्थान पर जन्म प्रभावी हो गया। वैदिककाल में महर्षियों को ब्राह्मण समझना एक भूल है वे सभी आर्य थे।

4

अर्गल के गौतम नरेश

हिन्दू संस्कृति, सभ्यता, धर्म एवं क्षत्रियत्व की भावना से ओत-प्रोत रहे हैं। वे अपने धर्म एवं स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए हर प्रकार के बलिदान के लिए तत्पर रहते थे। विदेशियों के आक्रमण जब भारतवर्ष में प्रारम्भ हुए उन्होंने अपनी सामर्थ्य भर उसका प्रतिकार किया। सन् 1192 में मुहम्मद शाहबुद्दीन गोरी द्वारा पृथ्वीराज चौहान को पराजित करने के पश्चात् गोरी के सिपहसालार कुतुबुद्दीन ऐबक ने कन्नौज पर आक्रमण किया। 1'94 में चन्द्रावर के मैदान (इटावा जनपद) में दोनों सेनाओं का सामना हुआ। कन्नौज की सेना बड़ी बहादुरी के साथ लड़ी और ऐसा प्रतीत हुआ कि विजय श्री गहरवारों को प्राप्त होने वाली है। तभी दुर्भाग्य से जयचन्द का हाथी भड़क गया और अनियंत्रित होकर भाग खड़ा हुआ। हाथी यमुना में कूद पड़ा और जयचन्द्र यमुना में डूब गया। हाथी को भागते देखकर सेना ने समझा कि राजा भाग रहा है। अत: जीती बाजी छोड़कर सेना भी भाग खड़ी हुई। इस प्रकार से कन्नौज का पतन हो गया। इस युद्ध में अर्गल नरेश रत्नसेन के भाई वीरसेन से कुतुबुद्दीन ऐबक के विरुद्ध जयचन्द्र की सहायतार्थ एक मोर्चा संभाला था और युद्ध में भी वीर गति को प्राप्त हुए थे। कन्नौज और अर्गल के मधुर वैवाहिक सम्बन्ध थे। राजा जयचन्द्र की बहन अर्गल नरेश रत्नसेन को विवाहित थी। जयचन्द्र को मुस्लिम आक्रमण का आभास पहले से था। कहा जाता है कि जयचन्द्र ने अपना खजाना ऐबक के आक्रमण से पूर्व अर्गल नरेश रत्नसेन के पास स्थानान्तरित करा दिया था। इस बात की पुष्टि इम्पीरियल गजेटियर आफ इण्डिया भी करता है।

According to tradition's the Raja of Argal held a large part of the district, before the Muslim conquest, and Jaichand, the last King of Kanauj is said to have deposited his treasures here before the final defeat in 1194.

4

अर्गल के गौतम नरेश

हिन्दू संस्कृति, सभ्यता, धर्म एवं क्षत्रियत्व की भावना से ओत-प्रोत रहे हैं। वे अपने धर्म एवं स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए हर प्रकार के बलिदान के लिए तत्पर रहते थे। विदेशियों के आक्रमण जब भारतवर्ष में प्रारम्भ हुए उन्होंने अपनी सामर्थ्य भर उसका प्रतिकार किया। सन् 1192 में मुहम्मद शाहबुद्दीन गोरी द्वारा पृथ्वीराज चौहान को पराजित करने के पश्चात् गोरी के सिपहसालार कुतुबुद्दीन ऐबक ने कन्नौज पर आक्रमण किया। 1'94 में चन्द्रावर के मैदान (इटावा जनपद) में दोनों सेनाओं का सामना हुआ। कन्नौज की सेना बड़ी बहादुरी के साथ लड़ी और ऐसा प्रतीत हुआ कि विजय श्री गहरवारों को प्राप्त होने वाली है। तभी दुर्भाग्य से जयचन्द का हाथी भड़क गया और अनियंत्रित होकर भाग खड़ा हुआ। हाथी यमुना में कूद पड़ा और जयचन्द्र यमुना में डूब गया। हाथी को भागते देखकर सेना ने समझा कि राजा भाग रहा है। अत: जीती बाजी छोड़कर सेना भी भाग खड़ी हुई। इस प्रकार से कन्नौज का पतन हो गया। इस युद्ध में अर्गल नरेश रत्नसेन के भाई वीरसेन से कुतुबुद्दीन ऐबक के विरुद्ध जयचन्द्र की सहायतार्थ एक मोर्चा संभाला था और युद्ध में भी वीर गति को प्राप्त हुए थे। कन्नौज और अर्गल के मधुर वैवाहिक सम्बन्ध थे। राजा जयचन्द्र की बहन अर्गल नरेश रत्नसेन को विवाहित थी। जयचन्द्र को मुस्लिम आक्रमण का आभास पहले से था। कहा जाता है कि जयचन्द्र ने अपना खजाना ऐबक के आक्रमण से पूर्व अर्गल नरेश रत्नसेन के पास स्थानान्तरित करा दिया था। इस बात की पुष्टि इम्पीरियल गजेटियर आफ इण्डिया भी करता है।

According to tradition's the Raja of Argal held a large part of the district, before the Muslim conquest, and Jaichand, the last King of Kanauj is said to have deposited his treasures here before the final defeat in 1194.

(परम्परानुसार मुस्लिम विजय से पूर्व जनपद का एक बहुत बड़ा भाग अर्गल के राजाओं के अधिकार में था। कहा जाता है कि कन्नौज के अन्तिम महाराजा जयचन्द ने 1194 में अन्तिम पराजय से पूर्व अपना समस्त राजकोष यहाँ जमा कर दिया था।)

सप्लीमेण्ट्री गजेटियर फतेहपुर में निम्नलिखित उल्लेख हैं–

Raja Ratansen married the sister of Jaichand of Kanauj and shared in the defeat of the latter by Muhammad Bin Sam

(रतनसेन का विवाह कन्नौज के राजा जयचन्द्र की बहिन के साथ हुआ था। उन्होंने मुहम्मद बिन साम से हुए युद्ध में जयचन्द्र का साथ दिया था। जिसमें उन्हें पराजय का मुख देखना पड़ा था।)

फतेहपुर में एक लमगोड़ा परिवार है। उस परिवार में जन्मे स्वर्गीय राजबहादुर लमगोड़ा का कथन था कि उनके पूर्वज मूलतः कन्नौज के निवासी थे। राजा रतनसेन का विवाह राजकुमारी कन्नौज के साथ होने पर उनके पूर्वज राजकुमारी के साथ अर्गल भेजे गये थे। समय की मार से अर्गल छोड़ कर उस परिवार को फतेहपुर में बसना पड़ा। लमगोड़ा की उपाधि महाराज अर्गल की दी हुई है। जबलपुर (म० प्र०) में कायस्थों का पचास परिवारों का एक कुटुम्ब है। उस कुटुम्ब के पूर्वज भी कभी अर्गल के ही निवासी थे। परन्तु इस्लाम धर्मावलम्बी, क्रूर, बर्बर, धर्मान्ध लुटेरों के आक्रमण जब अर्गल पर होने लगे तब अन्य लोगों की भाँति यह परिवार भी प्राणों की रक्षा के लिए भागा। घूमते-भटकते जबलपुर में जाकर आबाद हो गया और आज वह लगभग परिवारों का एक फल-फूल रहा कुटुम्ब है। अर्गल की याददाश्त बनाये रखने के लिए बुजुर्गों ने यह परम्परा डाली कि परिवार का प्रत्येक सदस्य नाम के अन्त में अर्गल शब्द जोड़ेगा। उसका पालन आज भी हो रहा है। यद्यपि उन्हें पता नहीं कि अर्गल कहाँ है।

मुस्लिम आक्रमण–अल्तुतमस का बेटा नासिरुद्दीन सन 1246 के आस-पास दिल्ली की गद्दी पर बैठा। नासिरुद्दीन इससे पूर्व अवध का सूबेदार रह चुका था। वह अपनी बहन रजिया बेगम के बाद दिल्ली के तख्त पर बैठा था। जब वह अवध का सूबेदार था तो उसने अर्गल पर आक्रमण किया। अर्गल की गद्दी पर उस समय राजा धीर पुनीरदेव विराजमान थे। धीर पुनीरदेव ने आक्रमणकारी का वीरतापूर्वक सामना किया। मुसलमान सेना बुरी तरह पराजित हुई। बड़ी संख्या में विधर्मी मारे गये। गौतम राजपूतों ने गंगानदी तक उनका पीछा किया और गंगा के उस पार खदेड़

दिया। अर्गल में इस विजय के उपलक्ष में हर्ष उल्लास मनाया जाने लगा तभी संयोगवश गंगा स्नान का पर्व गंगा दशहरा पड़ा। महिलायें बड़ी धर्म-भीरु होती हैं। आज भी हिन्दू स्त्रियाँ ही धार्मिक कार्यों के पालन में पुरुषों से आगे हैं। राजा धीर पुनीरदेव की पत्नी रानी अंगारमती थीं। उनके मन में यह विचार उत्पन्न हुआ कि भगवान् आशुतोष की कृपा से ही यह विजयश्री प्राप्त हुई है। अत: सदैव की भाँति इस वर्ष भी गंगा स्नान कर भगवान अर्गलेश्वर महादेव जी की पूजा अर्चना की जानी चाहिए अन्यथा भगवान् कुपित हो सकते हैं। परन्तु गंगा स्नान में एक बड़ी बाधा थी। पराजित सूबेदार गंगा के उस पार पड़ा अपनी पीड़ा को कम करने का उपाय सोच रहा था। रानी बड़ी दुविधा में पड़ गई। आराध्य देवता के प्रति कृतज्ञता प्रकट न करना घोर अपराध तो दूसरी तरफ राजा से ऐसे संकटकाल में गंगा स्नान की अनुमति असम्भव। अंगारमती के मन में भाँति-भाँति के विचार आते रहे। उन्होंने सोचा कि राजा को बिना सूचित किये बिना किसी आडम्बर के कुछ दास-दासियों और थोड़े से विश्वस्त सैनिकों को लेकर गंगा स्नान के लिए रात्रि में ही प्रस्थान कर और प्रात: ही स्नान कर लौट आवेगी। किसी को पता नहीं चलेगा लौटकर राजा को सब बताकर क्षमा-याचना कर लेगी। राजा उसे बहुत प्यार करते थे। वे न केवल क्षमा कर देंगे वरन् प्रसन्न भी होंगे, उसकी निर्भीकता और साहस को देखकर। आखिर वह भी क्षत्राणी है। वीर माता-पिता की सन्तान और वीर की ही पत्नी है। यद्यपि सूबेदार अवध उसके पति राजा धीर पुनीरदेव से पराजित हो चुका है तो क्या वह मुझसे बदला लेगा। नहीं, वीर पुरुष नारियों का सम्मान करते हैं और यदि उसने नीचता प्रदर्शित की भी तो वह भी देखेगा कि उसका पाला गौतम नरेश की पत्नी से पड़ा है। सिंहनी कहीं गीदड़ों से भयभीत हो सकती है। शस्त्र चालन एवं अश्वारोहण तो वह पितृ गृह में ही सीख चुकी है। यहाँ भी राजा के साथ कभी-कभी मृगया के लिए जाती है। रानी को पता नहीं था कि इस्लाम धर्म नारी, वृद्ध, बालक किसी के प्रति मानवता नहीं दिखलाता। रानी के उक्त विचारों ने दृढ़ता पकड़ी और कुछ दास, दासी, सहेलियाँ और कुछ सैनिक लेकर रात्रि में ही गंगा स्नान के लिए प्रस्थान कर दिया। योजनानुसार रानी ने गंगा तट पर पहुँच कर स्नान-पूजन अर्चन कर विपुल दान-दक्षिणा याचकों को दिया। रानी अंगारमती यद्यपि अपनी समझ में गुप्त रूप से ही गई थी। फिर भी उसका रूप लावण्य दास, दासी, सहेलियाँ, सैनिक, रथ, घोड़े आदि एवं मुक्तहस्त दान-दक्षिणा ने यह प्रकट कर दिया कि वह महारानी अर्गल ही हैं। इनाम

के लालच में किसी नराधम ने यह सूचना म्लेक्ष सूबेदार तक पहुँचा दी। सूबेदार पहले तो इस बात पर विश्वास नहीं कर सका कि रानी अर्गल बिना पर्याप्त सैन्य बल के यहाँ आई होगी। फिर उसने सोचा कि उसको पकड़ लेने में हर्ज ही क्या है। यदि वह रानी है तो हार का बदला ब्याज सहित चुकता हो जायेगा, यदि रानी नहीं है तो भी हरम में डाल लेगा अथवा किसी को उपहार में दे देगा। अत: उसने सेनानायक को बुलाकर रानी को पकड़ लेने का आदेश दे दिया।

इधर रानी अंगारमती स्नान, पूजन दान-दक्षिणा से निवृत्त होकर अर्गल के लिए चल पड़ी। रानी हर्षित थी कि अभी तक कोई विघ्न बाधा उपस्थित नहीं हुई। परन्तु कुछ ही देर में पीछे से शोर सुनाई पड़ने लगा तथा धूल उठते देखी, रानी सशंकित हो उठी। उसके संगी-साथी भी चौकन्ने होकर तेजी से अर्गल की ओर बढ़े। परन्तु वे लोग अधिक नहीं बढ़ पाये कि विधर्मियों ने उन्हें घेर लिया। रानी एवं उसका छोटा सा दल घबराया परन्तु शीघ्र ही रानी ने अपने को संयत कर लिया। रानी ने पुछवाया कि वे लोग कौन हैं और किस लिए मार्ग रोक रहे हैं। म्लेक्ष दल के नायक ने उत्तर दिया कि वे लोग सूबेदार अवध के सैनिक हैं और उन्हें आदेश है कि इस दल को महिलाओं सहित सूबेदार के सम्मुख पेश किया जाय। रानी ने कहलाया कि वे स्नानार्थी हैं और उन लोगों का सूबेदार से कोई प्रयोजन नहीं है। अत: मार्ग छोड़ दिया जाये और उन्हें जाने दिया जाये। परन्तु म्लेक्ष घेरे को तंग करते जा रहे थे। अन्ततः रानी ने समझ लिया कि प्राणोत्सर्ग का समय आ गया है। रानी अंगारमती ने गंगामैया, एवं भगवान आशुतोष का स्मरण किया। मन ही मन पति के चरणों की वन्दना की एवं अपराधों की क्षमा याचना की। इसके बाद रथ त्यागकर घोड़े पर सवारी की। घोड़े पर आसीन होकर क्षण भर को उसने चारो ओर दृष्टि दौड़ाई। रानी ने नग्न तलवार हाथ में ले अपने छोटे से दल को मार्ग की बाधायें दूर करते हुए आगे बढ़ने का आदेश दिया। सभी ने रानी को मध्य में कर 'हर हर महादेव', 'जय गंगे माता की' का निनाद कर आत्मोत्सर्ग के लिए आगे पैर बढ़ाया। यह देख यवन सैनिक भी चारो ओर से टूट पड़े। अर्गल के दल के प्रत्येक प्राणी स्त्री या पुरुष में एक ही भावना थी कि उसके जीवित रहते कोई म्लेक्ष रानी का स्पर्श न कर सके। रानी अंगारमती के नेत्रों से अंगारे बरसने लगे। उन्होंने अरि दल का गाजर मूली की भाँति **संहार** शुरू कर दिया। कुछ स्नानार्थी जिनमें हिन्दुत्व या क्षत्रियत्व की भावना थी, रानी की सहायतार्थ आये। कुछ राजभक्त प्रजागण भी आत्मोत्सर्ग के लिए आये।

शेष कायर लोग गंगातट छोड़, स्नान ध्यान भूल प्राण बचा भाग खड़े हुए। उस संकट की घड़ी में रानी की सहेलियों, दासियों तक ने अपने जौहर दिखलाये। पर बेचारी कहाँ तक युद्ध करतीं। एक-एक कर सभी मारी गयीं। जब गंगा तट पर भगदड़ मची तभी स्नानार्थियों में से किसी एक ने जिसके पास अच्छा घोड़ा भी था दुश्मनों की निगाह बचाकर अर्गल के लिए घोड़ा दौड़ा दिया। अर्गल पहुँच कर महराज धीर पुनीरदेव से गंगा तट का वृत्तान्त बतलाया। राजा पहले तो सकते में आ गये परन्तु शीघ्र ही युद्धास्त्रों से सज्जित हो अपने चुने हुए कुछ वीर सरदारों को लेकर तीव्रगामी अश्वों पर आरूढ़ हो युद्ध स्थल के लिए तेजी से चल पड़े। जाने के पूर्व सेना नायक को शीघ्र सैन्य सजाकर युद्धस्थल पर पहुँचने का आदेश दे गये। अर्गल में यह खबर वन की अग्नि की भाँति फैल गई। जिस युवक ने यह खबर सुनी, युद्ध-स्थल की ओर दौड़ पड़ा।

रानी अंगारमती जिस स्थान पर स्नान के लिए गई थीं वह स्थान बक्सर के नाम से जाना जाता है। गंगातट पर ही कुछ फासले पर दो बैस बन्धु जो पर्यटन के लिए निकले थे अपने छोटे से दल के साथ डेरा डाले पड़े हुए थे। उन दिनों बड़ी नदियों में नाव द्वारा अथवा नदी के किनारे-किनारे भी यात्रायें होती थीं। युद्ध का शोर उनके कानों में पड़ा। वे चौकन्ने हुए। एक व्यक्ति को टोह लेने के लिए भेजा। फिर कुछ स्नानार्थी उधर से होकर भागे। उनसे घटना का वृत्तान्त ज्ञात हुआ। यह जानकर कि सूबेदार अवध अभी कुछ दिन पहले ही गौतम नरेश धीर पुनीरदेव से पराजित हो चुका है और अब स्नान के लिए आई हुई महारानी अर्गल को पकड़ कर हार का बदला चुकाना चाहता है, खून खौल उठा। वे दोनों बैस राजपूत अभयचन्द एवं निर्भयचन्द अपने संगी-साथियों सहित शीघ्रता से रानी के सहायतार्थ आगे बढ़े। युद्ध-स्थल पर पहुँच कर म्लेक्षों के घेरे को काटकर रानी के बचे-खुचे दल को अपने मध्य कर युद्ध करते हुए अर्गल की ओर बढ़ने लगे। उस स्थल पर विकट संग्राम हुआ। म्लेक्ष दल शक्तिशाली था। दूसरी तरफ थोड़े से लोग, वह भी युद्ध के लिए सन्नद्ध होकर आये नहीं थे। दोनों बैस भाइयों ने बड़ा पराक्रम दिखलाया। उनकी मार से बड़ी संख्या में इस्लाम धर्मावलम्बी, आततायी मारे गये। रानी अंगारमती भी रणचण्डी बनी हुई थी। बहुतों को उसने यमलोक पठाया। युद्ध में अन्ततः निर्भयचन्द मारा गया। अभयचन्द ने देखा, भाई बिछुड़ गया। रानी ने भी देखा, बेटा शहीद हो गया। दोनों के नेत्रों से एक-एक अश्रु टपक पड़ा। वह अवसर न

तो शोक करने का था न हताश होने का। दोनों ही और अधिक क्रुद्ध हो यवनों का संहार करने लगे। तभी भगवान आशुतोष की कृपा से चमत्कार हुआ। अर्गल की ओर से धूल उठती हुई दिखाई पड़ी। रानी ने देखा, अभयचन्द ने देखा और यवनों ने भी देखा। सभी भ्रमित, आँधी का कोई लक्षण नहीं। परन्तु कुछ ही क्षणों में स्थिति स्पष्ट हो गई। बहुत से लोग घोड़ों पर सवार नंगी तलवारें उठाये, घोड़ों को वेग से दौड़ाते उधर ही बढ़े चले आ रहे थे। किसी अश्वारोही के हाथ में ध्वज भी है। हाँ, केशरिया ध्वज ही है। अर्गल का राज्य ध्वज। रानी अंगारमती के मन में आशा की बिजली कौंधी। क्या महाराज को इस विपत्ति की सूचना मिल गई। क्या द्रौपदी का चीर बढ़ाने वाले भगवान ने उसकी पुकार सुन ली है। कुछ ही क्षणों में महाराज अर्गल धीर पुनीरदेव ने तड़ित वेग से आकर म्लेक्ष दल पर भयंकर प्रहार किया। म्लेक्ष सेना राजा धीर पुनीरदेव के नाम से पहले से ही आतंकित थी, गौतमों के प्रहार से विचलित होकर भाग खड़ी हुई। गौतम राजपूतों ने उन्हें खदेड़-खदेड़ कर मारा। अनेकों गंगाजी में डूबकर मर गये। बचे हुए म्लेक्षों ने भागकर गंगा के उस पार जा प्राण बचाये। युद्ध में रानी अंगारमती एवं अभयचन्द्र बहुत थकित हो चुके थे। उनके शरीरों पर अनेकों घाव हो चुके थे। युद्ध के शान्त होने से उनके शरीरों की गर्मी भी क्षीण हो गई। रानी घोड़े से गिरने को ही थी कि महराज ने उसे सँभाल लिया। अभयचन्द के पास भी धीर पुनीरदेव पहुँचे, कृतज्ञता प्रकट की। बचे हुए सभी वीरों के पास गये। मृतकों का दाह संस्कार कराकर राजा ने घायलों, रानी और अभयचन्द को पालकी एवं रथों से अर्गल के लिए रवाना किया। अभयचन्द्र के स्वस्थ होने पर राजा ने उसे विशेष रूप से सम्मानित किया। भाऊपुर के एक सरदार की लड़की से विवाह कर गंगा के उस पार के 1440 गाँव जागीर के रूप में दे दिये। श्री रामसिंह जी ने इस घटना का वर्णन बड़े ही ओजपूर्ण शब्दों से किया है-जिसे कि पुस्तक के अन्तिम पृष्ठों में दिया गया है। फतेहपुर जिला गजेटियर में लिखा है–

Trilokchand families of Raibareli a very plausible contention, as the early history of that race is closely associated with the Raja of Argal.

(उस वंश के प्राचीन इतिहास की मान्य विचारधारा के अनुसार रायबरेली के त्रिलोकचन्द्र परिवार के साथ अर्गल नरेश के प्रगाढ़ सम्बन्ध रहे हैं।)

J. P. Hewett लिखता है–

The largest tracts of country to which their traditions refer, is Baiswara in Oudh. The transfer of 1440 villages in the eastern side of the Ganges is said to have been made in the form of dowry by the Raja's of Argal on the occasion of the marriage of a Gautam bride Bhao to a Bais chief who had assisted the Gautams against the King of Delhi. The story is told by the Bais clan as well as the Gautams, and the fact that the both clans concur in it, would seem to indicate its truth.

(जहाँ तक उनकी परम्परा संकेत देती है, देश का सबसे बड़ा भू-भाग अवध में बैसवारा नाम से ख्यात है। बताया जाता है कि गंगा के पूर्ववर्ती 1440 ग्रामों का हस्तान्तरण एक गौतम कन्या (दुल्हन) भास के एक बैस प्रमुख (सरदार) के साथ विवाह के अवसर पर दहेज के रूप में अर्गल नरेश द्वारा किया गया था जिसने दिल्लीश के विरुद्ध युद्ध में गौतमों का साथ दिया था। यह कथन बैस एवं गौतम दोनों जातियों का है और दोनों वर्गों का एकमत होना इस कथन की सत्यता सिद्ध करता हैं।)

इस घटना के सम्बन्ध में रायबरेली गजेटियर में भी निम्न उल्लेख हैं–

The story goes for twelve centuries, the Bais remained at Mungipattan, and that about 1250 A D. two Bais youths, named Nirbhaichand and Abhaichand, came from their ancestral home to Bathe in the Ganges at Baksar in the extreme southeren corner of Unao, and that while there an affray occured between the followers of the Gautam Raja of Argal in Fatehpur and the forces of Subedar of Oudh, as the latter were attempting, to carry of the Rani who had also came to Baithe in the sacred stream. The gallent Bais atonce came to rescue and beat off the Musalmans, but Nirbhaichand was left dead on the field Abhaichand escorted the ladies back to Argal. As was only right and proper, was rewarded with the hand of princess. In dowery he recieved from the Raja of Argal the large tract of the country beyond the river.

(बारहवीं शताब्दी की बात है कि वैस लोग मुंगीपट्टन में रह रहे थे सन् 1250 के लगभग निर्भयचन्द तथा अभयचन्द नामक दो वैस युवक अप पैत्रिक निवास स्थान से उन्नाव के ठेठ दक्षिण में स्थित बक्सर में गंगा-स्ना हेतु आये। उसी समय फतेहपुर के अर्गल नरेश के समर्थकों, जो गंगा स्नान के लिए ही आई हुई अपनी रानी को लिए जा रहे थे और अवध के नवाब के सूबेदार के मध्य संघर्ष हो गया। वीर वैस युवक तत्काल उनके त्राण हेतु आ गये और मुसलमानों को मार भगाया, परन्तु निर्भयचन्द युद्ध-क्षेत्र में मारा गया। अभयचन्द ने महिलाओं को सुरक्षित अर्गल पहुँचा दिया। फल-स्वरूप अभयचन्द को राजकुमारी के पाणिग्रहण से पुरस्कृत किया गया और उसे अर्गल नरेश की ओर से गंगापार का बड़ा इलाका दहेज स्वरूप प्राप्त हुआ।

साधारणत: वैस राजपूत अपनी लड़कियों का सम्बन्ध गौतम राजपूतों में करते हैं। सर हेनरी इलियट के० सी० बी० द्वारा लिखित मेमोयर्स में जो कि लन्दन से सन् 1869 में प्रकाशित हुई थी, से भी इस बात की पुष्टि होती है वह लिखता है—इस प्रान्त (उ० प्र०) में वैस लोग साधारणतः अपनी लड़कियाँ भदौरिया, चौहान, कछवाह, गौतम, सेंगर आदि राजपूतों को देते हैं तथा जनवार, बनाफर, खीचर, रघुवंशियों आदि की लेते हैं। उपर्युक्त घटना के सम्बन्ध में स्वर्गीय लाला भगवानदीन 'दीन' जी ने भी अपनी पुस्तक 'वीर पंचरत्न' में वर्णन किया है। जिसे यथा स्थान (परि-शिष्ट में) उद्धृत किया गया है। इस ऐतिहासिक घटना का वर्णन श्री ई० मार्सड़न साहब ने भी अपनी पुस्तक में किया है जो कि सन् 37-38 के आस-पास तक हाई स्कूल एवं इण्टर मीडिएट की कक्षाओं में पढ़ाई जाती थी।

द्वितीय आक्रमण—नासिरुद्दीन जब दिल्ली के तख्त पर बैठा उस समय का वर्णन 'तबकाते नासरी' में उसका आश्रित इतिहासकार निम्न प्रकार से करता है--1247-48 में उलुग खाँ ने आजम (बलबन) से निवेदन किया कि, उचित होगा कि इस वर्ष शाही पताकायें हिन्दुस्तान (दोआब) की ओर प्रस्थान करे, जिससे राजाओं व मवासात के निवासियों को जिन्हें वर्षों से दण्ड नहीं दिया जा सका है, दण्ड दिया जाय और मुगलों के विनाश के लिए धन सम्पत्ति प्राप्त हो। इस परामर्श पर शुभ पताकायें प्रस्थान करके गंगा और यमुना के दोआब पर पहुँचीं। युद्ध करके तलसंदा के किले पर अधिकार कर लिया।

ज्ञातव्य हो कि एक तलसड़ा कानपुर जनपद के घाटमपुर तहसील के अन्तर्गत है उसके आस-पास गौतम राजपूतों के ग्राम हैं। यह भी ध्यान

रखने योग्य है कि कानपुर जनपद उस काल में अर्गल राज्य के अन्तर्गत था और एक किले के चिन्ह अब भी वहाँ पर पाये जाते हैं। तलसंदा (तल-खड़ा) से अर्गल का फासला भी लगभग बीस मील होगा। (होदीवाला ने भी लिखा है कि तलसंदा कानपुर जनपद में है।) उलुग खाँ ने मुअज्जम (बलवन, जो बाद में दिल्ली की गद्दी पर बैठा) तथा अन्य मुसलमान मलिकों एवं सेना को 'दलकीओ-मलकी' से युद्ध करने के लिए भेजा। वह यमुना नदी के निकट उस स्थान का राजा था जो कि कालिंजर और कड़े के बीच में है और जिससे कालिंजर और मालवा के राजा युद्ध करने का साहस न कर सकते थे। उसके पास अत्यधिक सेना थी एवं धन सम्पत्ति भी थी। उसकी गढ़बन्दी, जंगलों, पहाड़ों, भयानक मार्गों के कारण इस्लामी सेना कभी उस ओर न पहुँच सकी थी। (मुस्लिम इतिहासकार 'मिनहाज' ने जिस राना 'दलकीओ-मलकी' का उल्लेख किया है वह निश्चय ही अर्गल नरेश धीर पुनीरदेव थे। मिनहाज यहाँ की भाषा नहीं जानता था। नामों के समझने में उसे कठिनाई होती थी। वह विदेशी था और अरबी जानता था। उसका उच्चारण और लेखन भी भिन्न था। इन इतिहासकारों ने इस प्रकार की भूलें बड़ी संख्या में की हैं। जैसे--जागभुलक=याज्ञवल्का, चर्मन्यत =चर्मण्वती, मच्ची=वत्स्य, पुरीर=पेशावर, पोक्खरो=पुष्कर, मोहूर= मथुरा, मुहरान नदी=सिन्धुनदी, अरदल=अर्गल इत्यादि। घटना का वर्णन, स्थान, काल आदि से यह स्पष्ट हो जाता है कि नासिरुद्दीन ने अर्गल पर चढ़ाई की थी। फतेहपुर जिला गजेटियर में एच. आर नेविल आई. सी. एस., एफ. आर. जी. एस.; एफ. एस. एस. लिखता है--

In 1248 Ulugkhan marched from Kanauj to Kora ravaging the country and slaughtering the Hindus, and it was on this occasion that the defeat of the mysterias chieftain, styled Dalaki-Malaki in the chronicles, took place. It might be suggested that this was a Gautam Raja.

(सन् 1248 में उलुग खाँ ने देश को लूटते हुए और हिन्दुओं का कत्लेआम करते हुए कन्नौज से प्रस्थान किया। यही वह अवसर था जबकि प्राचीन इतिहास में 'दलकी-मलकी' नाम से प्रसिद्ध रहस्यपूर्ण (गुप्त) सर-दार की पराजय हुई थी। मेरा विचार है कि यह गौतम राजा था।)

मिनहाज आगे लिखता है कि उलुग खाँ ने मुअज्जम जब उसके निवास स्थान तक पहुँच गया तो राना ने अपनी रक्षा इस वीरता से की कि प्रातःकाल से सायंकाल की नमाज तक इस्लामी सेना को कोई सफलता

प्राप्त न हो सकी। रात्रि में वह उस स्थान से एक दूसरे दृढ़ तथा सुरक्षित स्थान पर चला गया। दिन में इस्लामी सेना ने उस स्थान से प्रविष्ट होने के पश्चात् उसका पीछा किया। वह दुष्ट एक ऊँचे पर्वत पर चढ़कर एक ऐसे भयानक स्थान पर चला गया जहाँ मार्ग न होने के कारण उस स्थान पर बिना सीढ़ी या रस्सियों के चढ़ना-उतरना सम्भव न था। उलुग खाने मुअज्जम ने जिहाद का लालच दिया। उसके प्रोत्साहन व वीरता के कारण उस स्थान पर अधिकार कर लिया गया।

'आदि तुर्ककालीन भारत' (अनुवादक सैयद अतहर अब्बास रिजवी) में उल्लेख मिलता है कि कालिंजर से लौटते समय इस्लामी सेना के मार्ग पर अजारी राना का राज्य था। उस राना ने इस्लामी सेना का मार्ग गराना नदी तक रोक दिया था। (गराना नदी चिल्ला के पास यमुना नदी में गिरती है और अर्गल से बहुत दूर नहीं है। अर्गल के गौतम चार शाखाओं में विभक्त हैं। राजा, राना, राउत और राव।

"The Gautams are devided" says Sir. H. Illiot in to the tribes of Raja, Rao, Rana and Rawat. The represent. atives of Raja live at Argal, of the Rao at Birahimpur, of the Ranas at Chilli and of the Rawats at Bhaupur."

(सर एच० इलियट का कथन है–"गौतम समुदाय राजा, राव, राना तथा रावत वर्गों में विभक्त हैं। राजाओं के प्रतिनिधि अर्गल में, रावों के प्रतिनिधि विराहिमपुर में, रानाओं के प्रतिनिधि चिल्ली में तथा रावतों के प्रतिनिधि भाऊपुर में रहते हैं।)

राना जाहिर अजारी–(राना जवाहर सिंह गौतम) अर्गल के तत्कालीन सेनापति। लेखक मिनहाज ने नुसरउद्दीन तायसी से सुना है कि वह कहा करता था कि हिन्दुस्तान में किसी शत्रु ने उस हिन्दू अजारी के अतिरिक्त मेरी पीठ नहीं देखी है। उस हिन्दू अजारी ने मेरे ऊपर इस प्रकार आक्रमण किया जैसे कोई भेड़िया भेड़ों के गल्ले में घुस गया हो। मुझे उसके सामने से भागकर दूसरी ओर से आक्रमण करके परास्त करना पड़ा। मिनहाज लिखता है कि इस घटना का उल्लेख इस कारण करना पड़ा ताकि पाठक देखें कि उलुग खाने मुअज्जम कितना वीर पराक्रमी तथा युद्ध विद्या में इतना निपुण था कि उसने ऐसे शत्रु को पराजित किया। मुसलमान इतिहासकारों ने कभी भूल कर भी हिन्दू वीरों की प्रशंसा नहीं की, वरन् कटु वचनों का ही प्रयोग किया है। यहाँ पर भी उसने उलुग खाँ की ही प्रशंसा की है परन्तु अनजाने में गौतम वीर की प्रशंसा हो गई। पाठक देखें कि गौतम राजपूत

बड़े ही निर्भीक, बलिदानी और शौर्यवान थे। अर्गल राज्य यद्यपि कोई बहुत बड़ा राज्य नहीं था परन्तु प्रतिष्ठा, त्याग, वीरता, देश और धर्म पर मर मिटने की उत्कट भावना में मेवाड़ के सिसौदिया राणाओं से किसी प्रकार कम नहीं था। और यह स्वाभाविक है क्योंकि गौतम राजपूत भी उसी इक्ष्वाकु कुल से सम्बन्धित हैं जिसमें भगवान् राम, गौतम बुद्ध, गौतम ऋषि, राणा प्रताप आदि अनेकों महापुरुषों ने जन्म लिया था।

अर्गल नरेश भैंरोंशाह एवं सम्राट अकबर

बाबर की मृत्यु के पश्चात् उसका बेटा हुमायूँ दिल्ली के तख्त पर बैठा। 1530 से 1540 तक वह भारतवर्ष में रहा। इस अवधि में वह अधिकतर अपने भाइयों एवं स्वधर्मावलम्बियों से युद्ध में व्यस्त रहा। समय मिलने पर वह हिन्दू नरेशों से भी युद्ध करता रहा। शेरशाह सूरी जब हुमायूँ को भारतवर्ष से खदेड़ने में लगा था उस समय तत्कालीन अर्गल नरेश हरिचरन देव ने हुमायूँ के विरुद्ध शेरशाह की सहायता की। कन्नौज के निकट हुमायूँ और शेरशाह के युद्ध में अर्गल के गौतम राजपूतों की सेना ने भी भाग लिया था। वहाँ की पराजय के पश्चात हुमायूँ इधर-उधर भागता फिरा। अन्ततः इस देश को छोड़कर उसे ईरान जाना पड़ा। सन् 1545 में शेरशाह की मृत्यु के पश्चात् हुमायूँ एक बार फिर सन् 1555 में भारतवर्ष लौटा। 1556 में उसकी मृत्यु हो गई। 1556 में उसका बेटा अकबर तख्त-नशीन हुआ। सन् 1561 में अकबर कालपी होते हुये कड़ा जा रहा था। वह अर्गल के राजा का स्वातन्त्र्य प्रेम सहन नहीं कर सका और अपने पिता हुमायूँ के प्रति गौतम नरेश के विरोध का बदला लेने का विचार बनाया। उस समय राजा हरिचरन देव के पुत्र राजा भैंरोंशाह अर्गल की गद्दी पर थे। ज्यों ही राजा भैंरोंशाह को अकबर के इस विचार का पता चला तो वह सतर्क हो गये और युद्ध की तैयारी करने लगे। उसके सम्मुख राजपूत धर्म, कुल की प्रतिष्ठा व मर्यादा का प्रश्न बार-बार कौंधने लगा। उसने निर्णय किया कि क्षत्रिय धर्म व वंश की मर्यादा के लिये अकबर का सामना करना ही श्रेयस्कर है।

"क्षत्रिय तनु धरि समर सकाना।
कुल कलंक तेहि पामर जाना॥"

भले ही ऐसा करने में उसका, उसके परिवार का विनाश ही क्यों न हो जाय। उस समय तक मुगल काफी शक्तिशाली हो गये थे। अनेक राजे अकबर की अधीनता स्वीकार कर चुके थे। राजा भैंरोंशाह ने अपने बन्धु-

बांधवों को अकबर के इस नापाक इरादों से और अपने जूझ मरने की परम्परा के विचारों से अवगत कराते हुये साका करने का निमन्त्रण भेजा। शीघ्र ही छोटे-छोटे दलों में वीर राजपूत योद्धा अर्गल आने लगे। राजा भैरोंशाह ने सबसे विचार-मन्त्रणा करने के पश्चात् यह निर्णय किया कि मुगलों का सामना कालपी में ही किया जाय। अर्गल नरेश ने सभी की उपस्थिति में अपने बड़े पुत्र विश्वम्भर देव का राजतिलक कर दिया। अर्गल की सुरक्षा व्यवस्था दो विश्वस्त एवं अनुभवी सरदारों के सुपुर्द की। संकट की घड़ी में राजपरिवार की महिलाओं को अपना धर्म निर्वाह करने की जिम्मेदारी महारानी पर डाली। यह सब व्यवस्था करके राजा भैरोंशाह उत्साहित होकर अपने दलबल के साथ कालपी के लिये रवाना हुये। माताओं, बहनों और पत्नियों ने अपने पुत्रों, भाइयों और पतियों के तिलक लगाया तथा आरती उतारी। इस प्रकार अपने प्रियजनों को धर्म, गौ, ब्राह्मण की रक्षा के लिये अपने प्राणों का उत्सर्ग करने के लिये बिदा किया। कुलगुरु व अन्य ब्राह्मणों ने राजा भैरोंशाह की भुजा पूजी। स्वतिवाचन, मांगल्य पाठ किया और धर्म पर अडिग रहने का आशीर्वाद दिया। राजा भैरोंशाह ने अपने आराध्य भगवान अर्गलेश्वर महादेव की आराधना कर अपने सरदारों और सैनिकों सहित उल्लास के साथ रणांगण के लिये प्रस्थान किया। कालपी पहुँच कर गौतम नरेश भैरोंशाह ने रसद और पानी आदि की सुविधा को ध्यान में रखते हुए अकबर का मार्ग अवरुद्ध किया। राजा को अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। अकबर अपने विशाल सैन्यदल के साथ कालपी आ धमका। अकबर के सैन्यदल में लड़ाकू हाथी, घोड़सवार व बहुत पदाति थे। उसके अग्रिम दस्ते ने सूचना दी कि अर्गल नरेश भैरोंशाह मार्ग रोके हुए पड़ा है और इस्लामी सेना से दो-दो हाथ करना चाहता है। अकबर ने दूत भेजकर राजा को कहलाया कि वह अधीनता स्वीकार करे, खिराज अदा करे एवं वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करे तो उसको बख्श दिया जायगा। दूत से यह संदेश सुनकर राजपूतों में क्रोधाग्नि भड़क उठी और वे दूत को मारने के लिये उद्धत हो गये। राजा ने उन्हें वर्जित किया और दूत से कहा कि अकबर को इसका उत्तर रणक्षेत्र में ही मिलेगा।

यहाँ पर एक अन्य घटना की याद आती है। पाठक उसको पढ़ना पसन्द करेंगे। वह इस प्रकार है-महमूद गजनवी ने 1025 में सोमनाथ मन्दिर को लूटने व विध्वंस करने के लिये अभियान किया था। मार्ग में मरुस्थली के सिरे पर घोघागढ़ नाम का एक छोटा सा किला था। गढ़पति चौहान कुल शिरोमणि घोघाराणा थे। उनकी उम्र 90 वर्ष पार कर गई

थी। उनके परिवार में छोटे-बड़े स्त्री पुरुष सब मिलाकर 82 व्यक्ति थे। घोघागढ़ में कुल आठ सौ राजपूत एवं तीन सौ अन्य व्यक्ति थे। लगभग सात सौ स्त्रियाँ थीं। उधर म्लेक्ष गजनवी की सेना में एक लाख से अधिक लोग थे। घोघागढ़ एक प्रकार से चौकी थी। घोघाराणा की बिना अनुमति कोई मरुस्थली में प्रवेश नहीं कर सकता था। घोघागढ़ के निकट पहुँचकर महमूद ने दूत भेजकर घोघाराणा से मरुस्थल पार करने की अनुमति चाही दुभाषिया तिलक हज्जाम और सिपहसालार मसऊद ने सुल्तान की ओर से अशरफियों से भरा थाल नजर कर सुल्तान का अनुरोध कहा। घोघाराणा ने थाल में लात मारकर कहा कि यही मेरा उत्तर है। दूसरे दिन दुर्ग प्रहरियों ने दौड़कर घोघाराणा से कहा कि सुलतान मरुस्थली में प्रवेश कर रहा है। यह सुनकर घोघाराणा का मुख मण्डल क्रोध से लाल हो गया। उन्होंने कहा—मेरे जीवित रहते अमीर की यह हिम्मत। उन्होंने स्त्रियों को जौहर करने व पुरुषों को साका करने का आदेश दिया। स्त्रियों के जौहर करने के पश्चात दुर्ग का फाटक खोलकर राजपूतों ने जो कि संख्या में आठ सौ ही थे (जिनमें बृद्ध भी थे) महमूद गजनवी की सेना के पृष्ठ भाग पर आक्रमण कर दिया। यह दृश्य देखकर महमूद आश्चर्य चकित रह गया। बलिदान की यह उत्कट भावना क्या किसी अन्य देश या जाति में पाई जाती है। परिणामस्वरूप सभी राजपूत शत्रु का संहार करते हुए स्वयम् रण क्षेत्र में स्वर्ग को प्राप्त हो गये।

आज जो व्यक्ति तीन या छः महीने जेल में रह आया है वह स्वतंत्रता संग्राम सेनानी कहलाता है उसको अनेकों सुविधायें भी प्राप्त हैं। आज तो उन वीरों का इतिहास भी नहीं पढ़ाया जाता। भय है कि उन वीरों के त्याग बलिदान के समक्ष सत्ता में बैठे जेल यात्रियों की छवि धूमिल हो जायगी और जनता फिर इन पद-एश्वर्य-भोगियों को उठाकर बाहर फेंक देगी। यह एक सुनियोजित षडयंत्र है जो कि नेहरू के समय से चला आ रहा है।

दूसरे दिन गौतम रणबांकुरों में और अकबर की इस्लामी सेना में युद्ध प्रारम्भ हो गया। एक तरफ देश रक्षक, स्वतंत्रता प्रेमी, धर्मरक्षक थे तो दूसरी ओर विदेशी आक्रमणकारी, क्रूर, मानवता विहीन इस्लामी सेना थी। केशरिया पाग बाँधे राजपूत ऐसे प्रतीत होते थे मानो सैकड़ों बाल रवि म्लेच्छ रूपी गहन अन्धकार को दूर करने के लिए उदित हो गये हों। मध्याह्न से पूर्व ही युद्ध भयंकर हो गया था और बड़ी संख्या में राजपूत मारे जा चुके थे। परन्तु पीछे हटने का तो प्रश्न ही नहीं था।

"क्षत्रिय तनु धरि समर सकाना, कुल कलंक तेहि पाँवर जाना॥"

आजादी के ये दीवाने स्वेच्छा से अपने प्राणों का उत्सर्ग करने आये थे। गौतम वीर राजा भैंरोंशाह के शरीर में अनेकों घाव लग चुके थे। उनका घोड़ा पवन भी थक चुका था। परन्तु अधिक-से-अधिक शत्रु का संहार करने की बलवती इच्छा उनमें स्फूर्ति भर रही थी। गौतम वीर भैंरोंशाह का प्यारा घोड़ा पवन भी मानो समझ गया था कि उसकी स्वामिभक्ति की परीक्षा की घड़ी आज दाँव पर लगी है। तभी तो वह अपने स्वामी की इच्छा पर शत्रु के मध्य चारों ओर निर्भय दौड़ रहा था। अब भगवान् भास्कर अपनी दिन भर की यात्रा से थककर अस्ताचल की ओर जा रहे थे। दूसरी तरफ उनका वंशज राजा भैंरोंशाह भी अपने शौर्य की कीर्ति पताका फहराते हुये चिरनिद्रा में लीन हो गये।

"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।"

भगवान अच्युत श्रीकृष्ण ने गीता में कहा है–

न जायते भ्रियते व कदाचिन्नाय भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुरणो न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥20॥
नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदन्त्या न शोषयति मारूतः ॥23॥
हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा मोक्ष्यते महीम्।
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः ॥37॥

भगवान् श्रीकृष्ण के इन अमृत वचनों को सार्थक करते हुये गौतम क्षत्रिय कुलभूषण राजा भैंरोंशाह की आत्मा परमात्मा में विलीन हो गई।

जिला गजेटियर में एच० आर० नेविल लिखता है–

Humayun ascended the throne in 1530, he had to begin afresh, for Mahamud was established as an independent sovereign in Jaunpur. His place was soon taken by the Suri Sher Khan, who quietly extended his dominions and eventually over threw the Mughals near Kanauj. The local traditions standing that he was aided on this occasion by the Gautams of Argal.

(हुमायूँ सन् 1530 में गद्दी पर बैठा। उसे नये सिरे से कार्य प्रारम्भ करना था क्योंकि महमूद ने जौनपुर में अपनी सत्ता स्थापित कर ली थी। शीघ्र ही उसका स्थान सूरी शेर खाँ ने ग्रहण कर लिया जिसने धीरे-धीरे अपने राज्य का विस्तार किया और अन्ततः कन्नौज के पास मुगलों को परास्त

कर दिया। जनश्रुति के अनुसार इस अवसर पर अर्गल के गौतमों ने उसकी सहायता की थी।)

श्री जे० पी० हैवेट भी लिखता है–

The family however, continued to prosper for some generations till the head of the clan rendered assistance to Sher Khan in his revolt against Humayun. The clan then, as had been mentioned before, incurred the vengance of the emperor, and its power thence forth declined

(फिर भी जाति के प्रमुख सरदार द्वारा शेरखाँ को हुमायूँ के विरुद्ध विद्रोह में सहायता प्रदान करने की घटना से पूर्व यह परिवार कई पीढ़ियों तक समृद्धि की ओर अग्रसर रहा। जैसा कि पहले कहा जा चुका है यह वंश तत्पश्चात बादशाह के प्रतिशोध का शिकार बना और उसकी सत्ता का पतन हो गया।)

जिला गजेटियर में उल्लेख है–

A final struggle for independence was made by them in the reign of Akber, with whom they fought at Kalpi. Their leader Raja Bharon Shah was killed with many of his followers and the clan never regained its power.

(उनके द्वारा स्वतन्त्रता हेतु अन्तिम संघर्ष अकबर के शासन-काल में किया गया जिससे उन्होंने कालपी में युद्ध किया। उनके नेता राजा भैरों-शाह अपने साथियों सहित मारे गये और यह वंश फिर कभी अपनी सत्ता को पुनः प्राप्त न कर सका।)

आज अकबर को महान कहा जाता है। सत्ता लोभी भेड़िये कुछ भी कह सकते हैं। कहावत है स्वार्थी व्यक्ति आवश्यकता पड़ने पर गधे को भी बाप बनाते हैं। वोट की आवश्यकता आज भी राजनीति में शायद सबसे बड़ी आवश्यकता है। वर्ग विशेष का वोट प्राप्त करने के लिए ये लोग आज अत्यन्त घृणित स्तर तक गिर सकते हैं। इतिहासकारों ने लिखा है कि अकबर बड़ा महत्वाकांक्षी था। वह पूरे एशिया में अपना साम्राज्य स्थापित करना चाहता था। मुस्लिम इतिहासकार जियाउद्दीन बरसी एवं अनेक देशी इतिहासकारों की दृष्टि में अकबर महालोभी, कृपण, विश्वासघाती, हत्यारा मजहबी व्यक्ति था। उसने अपने गुरू और संरक्षक बैरम खाँ की हत्या करवा दी और उसकी स्त्री को अपने हरम में डाल दिया। उसने मीना बाजार लगवाना प्रारम्भ किया जहाँ वह महिलाओं का सतीत्व नष्ट करता था उसने गढ़ मंडल की

रानी दुर्गावती एवं दक्षिणा की चाँदबीबी पर आक्रमण कर अपने वीरत्व का प्रदर्शन किया था। आज की राजनीति उसके इन्हीं गुणों पर मुग्ध है। क्यों न हो, दोनों की विचारधारा एवं कार्य-पद्धति सम्भवतः एक जैसी है। यह सही है कि अकबर में उसके जीवन के उत्तरार्द्ध में धार्मिक कट्टरता उतनी नहीं रह गई थी। परन्तु यह उसकी कूटनीति थी महानता नहीं।

१८५७ का स्वतंत्रता-सग्राम एवं अर्गल नरेश की भूमिका—सन् 1707 में औरंगजेब की मृत्यु के पश्चात मुगल साम्राज्य का पतन प्रारम्भ हो गया था। दक्षिण में शिवाजी पश्चिम में राजपूतों व जाटों ने इस विशाल साम्राज्य के पावे हिला दिए थे। अकबर की हिन्दुओं से निकटता की कुटिलनीति रूपी अफीम के नशे ने हिन्दुओं को सुला दिया था। औरंगजेब की धार्मिक कट्टरता के उग्र थपेड़ों ने उन्हें जगा दिया। मुगल शाहजादे अय्यास और अकर्मण्य हो गये। अंग्रेजों ने जो अकबर के समय से व्यापारी के रूप में मौजूद थे परिस्थितियों से लाभ उठाया। छल छद्म और धूर्तता से वे पूरे देश के मालिक बन बैठे। 1857 में अर्गल की गद्दी पर राजा गनपत सिंह थे। अर्गल नरेश राजा विश्वम्भर देव ने अपने ही बंधु-बांधवों में से ठा० एक पर्वत देव को अट्ठाइस गाँव—कौड़िया गलाथा, रासूपुर, डुंडरा, रसूलपुर पधारा इत्यादि) जागीर में दिये और अपनी सेना का सेनापति नियुक्त किया था। उसी वंश परम्परा में 1857 में ठा० जोधासिंह गौतम, रसूलपुर गाँव में रहते थे। 1857 में राजा गनपत सिंह की स्थिति दयनीय थी। न राज्य था, न धन था, न शक्ति थी। परन्तु रक्त वही था जिसने अत्याचार का अनवरत विरोध करते हुए अपने को दीन और दुर्बल बना लिया था। उधर जोधा सिंह का भी ऐश्वर्य समाप्त हो गया था। परन्तु अपने राज्य के प्रति प्रेम और स्वामिभक्ति में कमी नहीं आई थी। अंग्रेजों की दमनकारी नीति, विश्वासघात आदि से इस देश की जनता क्षुब्ध हो उठी। यहाँ की हिन्दू जनता को पहले सैकड़ों वर्षों तक इस्लामिक धर्मावलम्बियों की पैशाचिक क्रूरता का सामना करना पड़ा था, अब वे इन फिरंगियों के अमानवीय व्यवहारों से पीड़ित थे। मुसलमान इसलिये दुखी था क्योंकि अभी तक वह सत्ता का उपभोग करता रहा था। विशेष सुविधायें उसे प्राप्त थीं। वह अपने को विजेता समझता था। दिल्ली का मुगल बादशाह बहादुर शाह दुर्बल, अय्याश एवं अंग्रेजों का आश्रित था। अर्गल के गौतम नरेश गनपत सिंह और ठा० जोधासिंह गौतम के दिन बड़ी विपन्नावस्था में कट रहे थे। फिर भी वे अंग्रेजों की नीति से क्षुब्ध थे। धीरे-धीरे फिरंगियों के प्रति हवा गर्म होने लगी। राजा गनपत सिंह ने ठा० जोधासिंह को देश की स्थिति को समझने

के लिये प्रभावशाली व्यक्तियों के पास भेजा। ठा० जोधासिंह अवध, झाँसी, बिठूर आदि स्थानों पर गये। लोगों से मिले। आम जनता की मनोदशा का भी आकलन किया। लौटकर उन्होंने राजा गनपत सिंह को अपने निष्कर्ष से अवगत कराया। जिस प्रकार से ठा० जोधासिंह घूम-फिर कर स्थिति की जानकारी कर रहे थे उसी प्रकार कुछ अन्य लोग भी राजा गनपत सिंह के पास आ-जा रहे थे। हालात कोई बहुत अच्छे नहीं थे। आम जनता के विचार कई श्रेणी में बँटे थे। लोग किसी झमेले में पड़ना नहीं चाहते थे। कुछ लोग फिरंगियों के प्रति उग्रविचार रखते थे। कुछ लोग परिस्थिति के अनुसार लाभ उठाना चाहते थे। हाँ, देशी फौजों (अंग्रेजों के भारतीय सिपाहियों) में आक्रोश था। भारतीय सैनिक अंग्रेजों की सेना में भरती होकर अपने ही देश के बन्धु-बान्धवों के विरुद्ध लड़ते थे। इनमें हिन्दू भी थे, मुसलमान भी। इन काले सिपाहियों के नाराजगी का कारण था अंग्रेज सिपाहियों और देशी सिपाहियों के बीच भेद-भाव। वेतन एवं सुख-सुविधाओं में भारी अन्तर, कारतूसों को लेकर फैली भ्रान्ति, धर्मच्युत होने का भय आदि।

राजा गनपत सिंह और ठा० जोधासिंह ने मिलकर यह निश्चित किया कि अपने स्तर पर तैयारी गोपनीय ढंग से प्रारम्भ कर दी जाय और अवसर के अनुसार देश-भक्त लोगों की सहमति से कार्य किया जाय। अन्ततः सैनिकों ने विद्रोह का बिगुल बजा दिया और सर्वप्रथम मेरठ छावनी में यह ज्वाला फूट पड़ी। यह खबर राजा गनपत सिंह और ठा० जोधासिंह तक भी पहुँची। 9 जून को ठा० जोधासिंह गौतम एवं ठा० महराज सिंह गौतम (पहुर निवासी) राजा गनपत सिंह से आज्ञा लेकर अपने साथियों के साथ फतेहपुर पहुँचे। ठा० दरियाव सिंह सिगरौर (खागा निवासी) से मिलकर सरकारी खजाना लूटने व जेल पर कब्जा करने का विफल प्रयास किया। परन्तु दूसरे दिन उन्हें सफलता मिल गई। फतेहपुर से लेकर पांडु नदी के पुल तक एवं गंगा नदी व यमुना के बीच के भाग में ठा० जोधासिंह और ठा० महराज सिंह ने अपना जाल फैला दिया। फतेहपुर से अंग्रेज अधिकारी बाँदा पहले ही भाग चुके थे। 27 जून को मेजर रेनार्ड एवं 6 जुलाई को जनरल हैवलॉक विद्रोह दबाने के लिये इलाहाबाद से चले। खागा और फतेहपुर को सर करते हुए अंग्रेज सेनापति औंग तक बढ़ आए। औंग में ठा० जोधासिंह गौतम एवं ठा० महराज सिंह गौतम ने अपने साथियों के साथ अंग्रेजी सेना को कानपुर की तरफ बढ़ने से रोका। बिठूर के नाना धोंधूपंत का सेनापति बालाराव भी सैन्य सहित आ गया। घोर युद्ध हुआ परन्तु सफलता अंग्रेजों को ही मिली। पांडु नदी पर पुनः युद्ध हुआ। बाला-

5

वंशावली

पुराणों में वर्णित इक्ष्वाकु वंश की सूची

ब्रह्मा–ब्रह्मा के दक्ष प्रजापति के पुत्र मनु। मनु के दश पुत्र हुए। इक्ष्वाकु, नृग, धृष्ठ, शर्याति, नारिष्यत, प्रांश, नाभाग, विष्ट, करुष, प्रषघ्र हुए। नाभाग के उसी के नाम का पुत्र नाभाग (द्वितीय) हुआ। नाभाग से अम्बरीष उससे विरूप, उससे प्रषदश्व और रथीतर हुआ। रथीतर की रुचि धर्मकर्म में अधिक थी। अत: वह ब्राह्मण हो गया। और उसके वंशज क्षत्रोपेत ब्राह्मण कहलाये।

इक्ष्वाकु–इक्ष्वाकु का पुत्र शशादि (विकुक्षि) उससे पुरंजय उससे कुकुत्स उससे अनेना, उससे पृथु, उससे विष्टराश्व, उससे चाद्रयुवनाश्व और युवनाश्व का पुत्र शावस्तु हुआ। शावस्तु का पुत्र बृहदश्व, उससे कुव-लयाश्व, उससे दृढाश्व, उससे हर्यश्व, उससे निकुम्भ, उससे अमिताश्व, उससे कृशाश्व हुआ। कृशाश्व का पुत्र प्रसेनजित, उससे युवनाश्व, उससे मांधाता, उससे पुरुकुत्स हुआ। पुरुकुत्स का भाई मांधाता का पुत्र अम्बरीष था। उसका पुत्र युवनाश्व, उसका पुत्र हारीत हुआ। हारीत ब्राह्मण हो गया और उसके वंशज अंगिरा गोत्रीय हारीत गण कहलाये। इससे पूर्व रथोतर के वंशज भी क्षत्रोपेत ब्राह्मण हो गये थे। अंगिरा गोत्रीय इसलिए कि अंगिरा ऋषि भी सूर्यवंशी थे। पुरुकुत्स का पुत्र त्रसदस्यु, उसका अनरण्य हुआ। उसका पुत्र प्रपदस्य, उसका हर्यश्व, उसका हस्त, उसका सुमना, उसका त्रिधन्वा, उसका अय्यारिणि, उसका त्रिशंकु, उसका हरिश्चन्द्र, उसका रोहिताश्व, उसका पुत्र हरित, उसका चंचु हुआ। चंचु का पुत्र विजय, उसका रुरुपा, उसका वृक, उसका वाहु, उसका सगर और सगर का पुत्र असमंजस हुआ। असमंजस का पुत्र अंशुकान, उसका दिलीप, उसका भगीरथ, उसका श्रुति, उसका नाभाग, उसका अम्बरीष, उसका सिन्धुद्वीप, उसका अन्युताय उसका ऋतुपर्ण, उसका सत्यपाल, उसका सुदास, उसका रौदास, मित्रसह उसका अश्मक, उसका मूलक, उसका दशरथ, उसका इलविल, उसका विश्व-

सह, उसका खटवांग, उसका दीर्घपाट, उसका रघु, उसका अंज, उसका दश-रथ, एवं उनके पुत्र राम हुए।

राम के पुत्र कुश

कुश के वंशजों की वृहद्वल शाखा (वृहद्वल महाभारत युद्ध में वीर-गति को प्राप्त हुए थे।) इक्ष्वाकु वंश की यह शाखा आज के गौतम क्षत्रिय हैं।

वृदद्वल, वृहत्क्षणां, उरुक्षेप, वता, वत्सव्यूह, प्रतिलोभ, भानु, दिवा-कर, सहदेव, वृहदष्य, भामुरथ, सुप्रतीक, सुप्रतीप, मरुदेव, सुनक्षत्र, किंवर, अंतरिक्ष सुवर्णा, अमित्रजित, ब्रहद्राज, धीमेन, कृतंजय, रणंजय, संजय, शाक्य, शुद्धोधत, सिद्धार्थ, (गौतम बुद्ध) राहुल प्रसेनजित, क्षुद्रक, कुंडक, सुख, सुमित्र (यह सूची विष्णुपुराण में दी हुई है।

सुमित्र

(1) अमृतोधन

(2) पांडु

(3) अंगदेव ने उ० प्र० के फतेहपुर जनपद में शक्ति अर्जित कर अर्गल की स्थापना की एवं एक दुर्ग का निर्माण कराया। किंवदंती के अनुसार इस स्थान का पूर्व नाम महाकाया था। एवं प्राचीन पवित्र स्थानों में से रखाँ था। (रेणुक: शूकर: काशी काली बटेश्वर कालिंजर महाकाया ऊखल नव मुक्तिद:)

(4) रंध्रदेव

(5) बलभद्र

(6) खुमान

(7) श्रीमान

(8) ध्वजमान

(9) शिवमान

(10) **वंशधर**–के भाई जनपद बदायूँ में स्थापित हुए। बदायूँ में गौतम क्षत्रियों के निम्न गाँव हैं। आर्य नगर (इस्लाम नगर) निवासी श्री सरदार सिंह गौतम के पुत्र श्री डा० सोमपाल सिंह गौतम से प्राप्त जानकारी के आधार पर बदायूँ जनपद से लगभग साठ गाँवों में गौतम क्षत्रिय बड़ी संख्या में पाए जाते हैं। सिठौली, नगलाबारहा, भवानीपुर, हैमपुर चिचैठा, सखामई, भुसाया, मितरौली, रुदायन जेंरडा आदि प्रमुख हैं। बरेली तथा अन्य आस पास के क्षेत्र में लगभग चौवन (54) गाँवों में गौतम राजपूत बसते हैं।

(11) वृतधर

(12) अग्निधर

(13) देवंतदेव

(14) सुशीलदेव

(15) महेन्द्र

(16) ययाति

(17) ब्रह्मपाल

(18) गंधर्वदेव

(19) **इन्द्रजीत**–घोरहा में घुड़साल बनवाया।

(20) ब्रह्मदेव

(51) क्षत्रधरदेव

(22) मानदेव शाही

(23) **निरमान**–इनके समय में कुछ गौतम होशंगाबाद में स्थापित हुए।

(24) **पृथुराजदेव**–के भाई ने देहुली डांड व ग्यारह बारह गाँव बसाये।

(25) तिलकधरदेव

(26) **धीरमानदेव**–अपने भाई के एक पुत्र को गुनीर आदि गाँव देकर वहाँ आबाद किया।

(27) शत्रुदित

(28) भूपाल देव

(29) **परीक्षित**–के भाई बलिया में स्थापित हुए।

(30) **महिपाल**–इनके समय में कुछ गौतम छपरा में आबाद हुए। जिला फतेहपुर के टाउन हाल में एक पत्थर खम्भ पर आपका नाम अंकित है। समय लगभग 917 ए० डी०।

(31) **वज्रधर द्वितीय**–रिन्द नदी के किनारे नरैचा में गढ़ी बनवाई।

(32) कश्यपमान

(33) **सूर्यमान**–के समय में राज परिवार के कुछ लोग जनपद गाजीपुर जमुनियाँ में स्थापित हुए। समय लगभग 1025-26 के आस-पास, जब महमूद गजनवी का आक्रमण सोमनाथ पर हुआ था।

(34) मुकुटमणि

(35) चन्द्रमणि

(36) भीष्मदेव

(37) **शूलराज**–ने बिंदकी के निकट सौंह महरहा में गढ़ी बनवाई

जिसके खण्डहर अभी देखे जा सकते हैं ।

(38) **रतनसेन**-को कन्नौज के गहरवार नरेश जयचन्द की बहिन विवाहित थी । मोहम्मद गोरी के सिपहसालार कुतबुद्दीन ऐबक से जब 1194 में चन्द्रावर के मैदान में जयचंद से युद्ध हुआ था उस समय अर्गल नरेश रतनसेन के भाई भी कन्नौज नरेश के पक्ष में युद्ध करते वीरगति को प्राप्त हुए थे । जगनायक अर्गल राज परिवार के थे । और महोबा के चन्देलों के भानजे थे । जगनायक कवि भी थे और उन्होंने जगनायक रासो नामक काव्य ग्रंथ भी लिखा । जिला गजेटियर फतेहपुर में एच.आर. नेविल लिखता है–

His son was Ratan Sen who married the sister of Jaichand of Kanauj and shared in the defeat inflicted on the latter by Muhammad Binsam.

(उसका पुत्र रतनसेन था जिसने कन्नौज के राजा जयचन्द्र की भगिनी से विवाह किया था । और मोहम्मद बिन साम के साथ हुए युद्ध में जयचंद का साथ दिया परन्तु जयचन्द पराजित हो गए थे ।)

एच० पी० हेवट भी फतेहपुर गजेटियर में लिखता है–

Raja Ratan Sen Shared in the defeat inflicted on the Raja Jaichand of Kanauj by Muhammad Shahab-ud-din Gori.

(राजा रतनसेन मोहम्मद शहाबुद्दीन गोरी द्वारा कन्नौज के राजा को दी गई पराजय में सतभागी बने ।)

एच० आर० नेविल आगे लिखता है–

His son was Kaling Deo who built the fort of Kora and was killed according to the tradition, fighting against Prithvi Raj at the battle of Mahoba.

(उसके पुत्र का नाम कलिंगदेव था । जिसने कोड़ा के दुर्ग का निर्माण कराया जनश्रुति के अनुसार कलिंगदेव महोबा में पृथ्वीराज के साथ हुए युद्ध में मारे गये ।)

जगनायक ने आल्ह खण्ड भी लिखा जो हिन्दी भाषी प्रान्तों में बड़ा लोकप्रिय है एवं वर्षा ऋतु में गाया जाता है ।

(39) कर्णदेव ने गंगातट पर कानपुर ग्राम की स्थापना की ।

(40) शूलराजदेव के चार पुत्र हुए ।

(41) राजा शूलराजदेव ने बारह गाँव शीशपुर, नौगवाँ, रायपुर आदि (जनपद कानपुर में) अपने परिवार के एक बंधु को उसकी सेवाओं से

प्रसन्न होकर जागीर के रूप में दिए और बनपुर का खिताब दिया। सम्भव है कि बनपुर कोई गांव रहा हो पश्चात नष्ट हो गया हो।

(42) **मूलराज**–ने रहन्सी में एक दुर्ग एवं एक तालाब का निर्माण कराया।

(43) **धीर पुनीरदेव**–इनके समय का वृत्तांत विस्तार से पिछले पृष्ठों में दिया जा चुका है।

(44) **मानदेव**–अपने भाई जाहर सिंह को राना की उपाधि देकर चिल्ली आदि साठ ग्राम जागीर में दिया। राना जाहर का वर्णन भी पिछले पृष्ठों में आ चुका है।

(45) सूरपालदेव

(46) **गगदेव**–ने कुँवपुर ग्राम बसाया जो कि मुगल रोड पर है।

(47) **कलिंगदेव**–कोड़े के पुराने दुर्ग का जीर्णोद्धार कराया।

(48) **शूलविक्रम**

(49) **दृगपाल** [देवपाल]–के एक भाई विजय सिंह ने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया तथा बिजली खाँ नाम रखा। दूसरा भाई बयार सिंह भी मुसलमान हो गया और बहादुर खाँ नाम रखा। यह क्रूर धर्मांध मंदिरों के विध्वंसक अलाउद्दीन खिलजी का समय ज्ञात होता है। भारतवर्ष में हुए इस्लाम धर्मावलम्बी पिशाच शासकों में से एक था जिसके कारनामों को देखकर हैवान भी भयभीत हो गया था। अपने चाचा जलालुद्दीन को धोखे से वध कर सत्ता हथियाने वाले इस नराधम के सम्बन्ध में मुस्लिम इतिहासकारों ने एक प्रसंग में लिखा है–अलाउद्दीन खिलजी ने एक दिन अपने काजी मुगीश से प्रश्न किया कि हिन्दू खिराजगुजार तथा खिराजदेह के सम्बन्ध में शरह की क्या आज्ञायें हैं? काजी मुगीश ने उत्तर दिया कि हिन्दू खिराजगुजार व खिराजदेह के सम्बन्ध में शरा की यह आज्ञा है कि कर वसूल करने वाला इस्लाम का सेवक जब किसी काफिर से चांदी मांगे तो वह बिना सोचे विचारे सोना दे दे। यदि कर वसूल करने वाला थकना चाहे तो काफिर तुरन्त अपना मुँह खोल दे। इतिहासकार एच० पी० हैवेट लिखता है–

Bijai Singh, brother of Raja Deopal (Drigpal Singh) of Argal embraced the Muhammadan faith, took the title of Bijili Khan, and after defeating his brother, usurped his place. He captured the fort of Kora, and the family prospered for four generations. Bayar Singh another brother of Bijai Singh adopted the title of Bahadur Khan and his

famlly well to do, and built a fort of Garhi

(अर्गल के राजा देवपाल (दृगपाल सिंह) के भाई विजय सिंह ने इस्लाम धर्म स्वीकार कर लिया तथा बिजली खाँ की उपाधि धारण की और अपने भाई को पराजित कर उनका स्थान हथिया लिया। उसने कोड़ा के किले पर आधिपत्य कर लिया और परिवार चार पीढ़ियों तक समृद्धशाली बना रहा। विजय सिंह के एक अन्य भाई ने बहादुर खाँ नाम धारण कर लिया। उसका परिवार समृद्ध हुआ और उसने गढ़ी का किला बनवाया।)

(50) शत्रुजित

(51) रणधीर

(52) **भोजराज**–हरिसिंह को रावत की उपाधि दी तथा चौदह गाँव जागीर में दिया। नीलमणि कुर्मी जो कि खजाने में कामदार थे उन पर प्रसन्न होकर मझिलेगाँव इनाम में दिया। राजा भोजराज देव का एक राजकुमार दिल्ली के सुलतानों द्वारा बन्दी बना लिया गया था। केदार कपरिया ने अपनी चातुरी से उस राजकुमार को दुश्मनों से मुक्त करा लिया था। भोजराज ने प्रसन्न होकर बिंदकी ग्राम उसको दिया एवं सम्पूर्ण राज्य में भिक्षाटन की अनुमति दी। जिला गजेटियर में निम्न उल्लेख हैं–

The Kaparias are a wandering tribe, of whom 14 only were returened at the time of census. Some members of the tribe are mentioned in the Hamirpur sattlement report as having reoccupied Siuni in the district after its distruction by Aurangzeb Traditions assigns them a stay of 100 years, when they were supplanted by Lodas. There is a tradition that Kedar ancestor of the Kaparias, released a son of Raja of Argal, who had been taken as an hostage by some Prince near Delhi, with whome the Argal Raja was then at war.

(कपरिया एक घुमक्कड़ जाति के हैं। जनगणना के समय उनमें से केवल 14 का ही पता चला। हमीरपुर के बन्दोबस्त में इस जाति के कुछ सदस्यों का उल्लेख मिलता है जिसके विषय में कहा जाता है कि इन्होंने औरंगजेब द्वारा की गई विनाश-लीला के उपरान्त जनपद के सिउनी नामक स्थान पर पुनः कब्जा कर लिया था। जनश्रुति है कि कपरियों के पूर्वज केदार ने अर्गल नरेश के एक पुत्र को जिसे अर्गल नरेश के प्रतिद्वन्द्वी किसी शहजादे (राजकुमार) द्वारा दिल्ली के पास बन्धक बना लिया था, मुक्त कराया था।)

(53) **प्रसेनदेव**—के भाई सूरसेन ने अपने नाम का सुरीली ग्राम आबाद किया। (यमुना तट पर जनपद हमीरपुर) राजा प्रसेनदेव ने अपने भाई सूरसेन को गुजारे के लिए पाँच गाँव दिया। जनश्रुति है कि एक बार राजा प्रसेनदेव शिकार खेलने यमुना के किनारे बीहड़ों में गए थे। वहाँ पर चाँद भाट की रूपसी पुत्री पर आसक्त हो गए। कालांतर में उस कन्या से एक पुत्र हुआ उसका नाम गुलाबसेन रखा और चाँदपुर सहित चार गाँव गुजारे के लिए दिए।

(54) **सहदेवराज**--के एक भाई गाजीपुर जमुनियां (उ० प्र०) में जाकर आबाद हुए। एक अन्य भाई मुसलमान हो गया। आजमशाह नाम रखा। अपने नाम का आजमगढ़ शहर बसाया। राजा की उपाधि प्राप्त का श्री अमरनाथ सिंह गौतम आई० ए० एस० के पूर्वज सम्भवतः इसी काल में अर्गल से गाजीपुर गए थे। श्री विजयनाथ सिंह गौतम डी० आई० जी० के पूर्वज भी सम्भवतः इसी काल में आजमगढ़ स्थानान्तरित हुए।

(55) **लक्ष्मणदेव**—ने अपने भाई बाँकेराय को मौहार एवं अन्य गाँव गुजारे के लिए देकर वहाँ स्थापित किया। एक समय राजा लक्ष्मणदेव बहरौली गए। वहाँ पर गौतमों को अमर्यादित कार्य करते पाया। अतः बिरादरी से बहिष्कृत किया।

(56) **वीरसिंहदेव**—विजयपुर के गहरवारों के यहाँ विवाह हुआ। पाटनबयार के विजयानन्द जनवार की बहन से विवाह किया। दिल्ली सल्तनत से छोटी-छोटी झड़पे हुईं। जगरवंशी ब्राह्मणों को चौधरी की उपाधि एवं जागीर प्रदान की। अपने एक स्वजन पर्वतदेव को अट्ठाइस गाँव जागीर दी और सेना का सेनापति नियुक्त किया। इस परिवार के वंशज अब भी अट्ठाइसा के गौतम कहलाते हैं। इसी वंश में आगे चलकर ठा० जोधासिंह गौतम ने जन्म लिया जो 1857 में स्वतंत्रता संग्राम में शहीद हुए थे।

(57) मदन सिंह

(58) मान सिंह

(59) **हरिबरनदेव**—राजा हरिवरनदेव ने हुमायूँ के विरुद्ध शेरशाह की मदद की थी। हुमायूँ शेरशाह की मृत्यु के पश्चात् फिर भारत लौटा। एक बार फिर अर्गल के गौतम नरेश मुगलों के कोपभाजन बने। हुमायूँ के बेटे अकबर ने अर्गल पर आक्रमण किया।

एच० आर० नेविल लिखता है—

Humayun ascended the throne in 1530. He had to begin fresh, for Mahamud was established as an independent

sovereign in Jaunpur. His place was soon taken by the Suri Sher Khan, who quietly extenceded his dominions and eventually over threw the Mugals near Kanauj. The lokal traditions stating that he was aided on this occason by the Gautams of Argal.

(हुमायूँ सन् 1530 में गद्दी पर बैठा। उसे नये सिरे से कार्य प्रारम्भ करना था क्योंकि महमूद ने जौनपुर में अपनी सत्ता स्थापित कर ली थी। शीघ्र ही उसका स्थान सूरी शेर खाँ ने ग्रहण कर लिया जिसने धीरे-धीरे अपने राज्य का विस्तार किया और अन्ततः कन्नौज के पास मुगलों को परास्त कर दिया। जनश्रुति के अनुसार इस अवसर पर अर्गल के गौतमों ने उसकी सहायता की थी।)

इतिहासकार जे० पी० हैवेट भी लिखता है–

The family however continued to prosper for some generations till the head of the clan rendered assistance to Sher Khan in his revolt against Humayun. The clan then, as had been mentioned before incurred the vengence of the imperor and its power thenceforth declined.

(फिर भी जाति के प्रमुख सरदार शेर खाँ को हुमायूँ के विरुद्ध विद्रोह में सहायता प्रदान करने की घटना से पूर्व यह परिवार कई पीढ़ियों तक समृद्धि की ओर अग्रसर रहा। जैसा कि पहले कहा जा चुका है। यह वंश तत्पश्चात बादशाह के प्रतिशोध का शिकार बना और उसकी सत्ता का पतन हो गया।)

यह स्पष्ट हो जाता है कि अर्गल के गौतम राजपूत नरेशों ने निरंतर देश की स्वतंत्रता, स्वाभिमान एवं गौरव के लिए युद्ध कर अपने को निर्बल कर लिया था। परन्तु पैर पीछे नहीं हटाया।

(60) **भैरोंशाह**–का वृत्तान्त विस्तार से पिछले पृष्ठों में दिया जा चुका है।

(61) विसम्भरदेव

(62) संग्राम सिंह

(63) हर्मारदेव–शाहजहाँ के प्रति विद्रोह

(64) भगवंतदेव–प्रतापगढ़ के शोमवंशियों के यहाँ विवाहित।

मिस्टर एच० आर० नेविल का कथन है–

Raja Bhagwant Deo, who had married one of Sombansi

of pratapgarha, was reduced to the position of a small Zam. indar. In the days of Seh Jahan the family fort was distroyed says mr. H. R. Nevill.

(राजा भगवन्त सिंह जिन्होंने प्रतापगढ़ की एक सोमवंशी कन्या से विवाह किया था केवल एक छोटे जमींदार की हैसियत में रह गये थे। शाहजहाँ के शासन-काल में इस परिवार का दुर्ग नष्ट कर दिया गया था।)

(65) इन्द्रजीतदेव

(66) **डूंगरशाह**–सुमेरी कवीश्वर भाट को मौजा भौराजपुर दिया।

(67) हिम्मत वहादुर देव–ने औरंगजेब की सहायता की। फलस्वरूप उसने एक फरमान दिया। जिसका अनुवाद निम्न प्रकार है–

True translation of certificat granted by the H. H. the King Alamgir of Delhi during the year 1685.

H. H. the Nawab Alamgir of Delhi awarded in his pleasent circumstances to Raja Saheb Himmat Singh Taluka Argal, Cyakla Kora circle Suba Allabad as follows.

The aforsaid Raja Saheb may be payed the half costom fee of his limits (excapt Jagir and Nanker) to the Govt. and half for the expences as the Govt. has considered on investigation of the case, which ascertained on enquriy by the Karoriyon for the aforsaid Rajah who was destroyed and ruined by the farmers Kings.

[सन् 1685 में दिल्ली के हिज हाईनैस वादशाह आलमगीर द्वारा प्रदत्त प्रमाण पत्र का यथार्थ अनुवाद–दिल्ली के वादशाह नवाव आलमगीर अपनी स्वस्थ-प्रसन्न मनःस्थिति में राजा साहव हिम्मत सिंह ताल्लुका अर्गल चकला कोडा क्षेत्र, सूबा इलहावाद को निम्नलिखित प्रदान करते हैं–

उपर्युक्त (जागीर और नानकार को छोड़कर) अपनी सीमा के कर का अर्द्धांश (आधा भाग) शासन को देंगे और शेष आधा भाग अपने व्यय के लिए रखेंगे।

जैसाकि उक्त राजा जो पूर्ववर्ती वादशाहों द्वारा नष्ट-भ्रष्ट कर दिए गए थे के प्रकरण पर छानबीन के उपरान्त शासन ने विचार किया जिसकी पुष्टि उक्त राजा के विषय में करोरियान द्वारा की गई पूछ-ताछ से भी हो गई है।]

(68) **अचलसिंहदेव**–जब अल्पायु के थे तव भवसिंह उनका अभि-

भावक बन बैठा। परन्तु शीशूपुर नौगवाँ के ठा० मदन सिंह और मौहार के ठा० लकवा सिंह ने बिरादरी के अन्य लोगों के सहयोग से भवसिंह को अर्गल से निकाल बाहर किया। राजा अचलसिंह के कार्यकाल में ही अवध के सूबेदार सआदत खाँ का अन्तिम आक्रमण हुआ। इतिहासकार श्री ग्राउस ने सप्लीमेंट्री गजेटियर में लिखा है–

The crowning act occurred when Raja Achal Singh offered resistance to Saadat Khan, the first Nawab Wazir of Oudha, and was utterly crushed in 1727.

(ताजपोशी तब हुई जब राजा अचल सिंह ने अवध के प्रथम नवाब बजीर सयादत खाँ का प्रतिरोध किया उन्हें सन् 1727 में बुरी तरह कुचल दिया गया।)

सआदत खाँ के हमले के पश्चात लगभग 1798 के आस पास अर्गल राजपरिवार से एक परिवार अपना भाग्य आजमाने मैनपुरी जनपद आया जिसके अग्रज ठा० श्यामसिंह थे। इस नये क्षेत्र में आकर अवसर पाकर किसी पिण्डारी नवाब से संघर्ष किया तथा उसके क्षेत्र में कब्जा कर लिया। पुंड्री में इन्होंने अपनी गढ़ी बनवाई। उस परिवार का सजरा इस प्रकार है श्री श्यामसिंह, श्री धाराजीतसिंह, ठा० रुस्तमसिंह (1841-1895) ठा० खुशालसिंह (1866-1918) लाल नौरतनसिंह 1902 अभी जीवित हैं। उनके तीन पुत्र श्री भूपेन्द्रसिंह श्री मेजर, रवीन्द्रसिंह और श्री शचीन्द्रसिंह हैं। इन तीनों का वंश वृक्ष फल फूल रहा है। परन्तु काल गति के चक्र में अब यह परिवार देहरादून में रहता है।

(69) सदन सिंह

(70) अमान सिंह–अपनी विपन्नावस्था में भी बड़े उदार व दानी थे। अनेकों किंवदंतियाँ उनकी उदारता के सम्बन्ध में प्रचलित हैं।

(71) गनपत सिंह–सन् 1857 का स्वतंत्रता संग्राम इनके समय में हुआ। उसका विवरण पिछले पृष्ठों में दिया जा चुका है।

(72) लाल शिवराम सिंह जूदेव

(73) कु० शिवराजसिंह ने अपने पुत्र श्री विशेश्वरसिंह के हक में गद्दी का परित्याग कर दिया था। उनका राजतिलक नहीं हुआ।

(74) विशेश्वर सिंह जूदेव

(75) चन्द्रभान सिंह जूदेव–जन्म 10 नवम्बर सन् 1921